श्री गुरवे नमः

शिक्षा कौस्तुभ

त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष 02 | अंक 03 | मार्च 2024 | पृष्ठ 58

हिन्दू नव संवत्सर

विक्रम संवत् 2081

प्रकाशक

पण्डित मोतीलाल जोशी
प्राच्य विद्या अनुसंधान केन्द्र

राजस्थान शिक्षक
प्रशिक्षण विद्यापीठ

राजस्थान संस्कृत
साहित्य सम्मेलन

प्रेरणा स्रोत : ''संस्कृत सुमेरु'' पं. मोतीलाल जोशी

शिक्षा कौस्तुभ

त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष 2 | अंक 3 मार्च 2024 | पृष्ठ 58

आशीष प्रदाता
- श्री श्री 1008 भुवनेश्वरानंद जी महाराज
- महंत श्री राम प्रसाद जी महाराज
- महंत श्री हरिशंकर दास जी वेदांती

प्रेरणा स्त्रोत
'संस्कृत सुमेरु'
पं. मोतीलाल जोशी

परामर्श मंडल
- देवर्षि कलानाथ शास्त्री
- प्रो. बनवारी लाल गौड़
- प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र
- प्रो. युगल किशोर मिश्र
- प्रो. रमेश कुमार पाण्डेय
- प्रो. जयप्रकाश नारायण द्विवेदी
- प्रो. सदानंद दीक्षित
- प्रो. गोपीनाथ शर्मा
- डॉ. सरोज कोचर

निर्णायक मण्डल
- डॉ. राजेश्वरी भट्ट
- प्रो. श्रीकृष्ण शर्मा
- प्रो. ताराशंकर पाण्डेय
- डॉ. रामदेव साहू
- डॉ. कृष्णा शर्मा
- प्रो. कुलदीप शर्मा
- डॉ. सुभद्रा जोशी

प्रबन्ध संपादक
डॉ. राजकुमार जोशी

प्रधान संपादक
डॉ. मनीषा शर्मा

संपादक मंडल
डॉ. सीताराम दोतोलिया
डॉ. निरंजन साहू
डॉ. सुरेंद्र कुमार शर्मा
श्रीमती मीनाक्षी शर्मा

प्रकाशक
पण्डित मोतीलाल जोशी प्राच्य विद्या अनुसंधान केन्द्र
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ
राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन
शाहपुरा बाग, आमेर रोड़, जयपुर
Ph. : +91-141-2671967 | E-mail : info@rspv.org | Website : www.rspv.org

अनुक्रमणिका

1.	सम्वत्सर चक्र	डॉ. मनीषा शर्मा	4
2.	विज्ञानं ज्ञानपूर्वकम्	गोपीनाथ पारीक गोपेश	8
3.	अभिज्ञानशाकुन्तले समाजव्यवस्था	डॉ. निरञ्जनसाहुः	12
4.	NEP 2020: संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ	केशव मिश्रा	18
5.	मानसिक पर्यावरण प्रदूषण व उसका निवारण : श्रीमद्भगवद्गीता की प्रासंगिकता	प्रो. पूर्णचन्द्र उपाध्याय	25
6.	अध्यापक शिक्षा में एक नये युग की शुरुआत	श्रीमती कविता भारद्वाज	30
7.	महान शिक्षाविद डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम एवं डॉ. राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन	मलखान मीणा	33
8.	वर्तमान में जीवनमूल्यों की प्रासंगिकता	डॉ. राम प्रकाश डॉ. यदु शर्मा	40
9.	गौतम बुद्ध एवं डॉ. अम्बेडकर के शैक्षिक विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता	श्रीमती अनिता शर्मा	45
10.	वेदांत दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन	सुभाष मीना	50
11.	जीवनयात्रा	डॉ. सीताराम दोतोलिया	54

मुद्रण : **कन्ट्रोल पी**, जयपुर - मो. : 9549666600

सम्पादकीय

राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन एवं राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ शाहपुराबाग, जयपुर द्वारा श्री श्री 1008 भुवनेश्वरानंद जी महाराज, महंत श्री राम प्रसाद जी महाराज एवं महंत श्री हरिशंकर दास जी वेदांती के शुभाशीर्वाद के परिणामस्वरूप **'शिक्षा कौस्तुभ'** त्रैमासिक शोधपत्रिका के द्वितीय वर्ष का प्रथम अंक प्रकाशित किया जा रहा है। 'संस्कृत सुमेरु' विद्वत् - शिरोमणि स्व. पं. मोतीलाल जी जोशी के संकल्प की परिणति के रूप में उनकी शाश्वती प्रेरणा का यह उत्कृष्ट आयाम विज्ञ परामर्शदाताओं के सत्परामर्श से निर्मित करके संपादक मण्डल द्वारा सम्पादित किया जा रहा है।

त्रैमासिक शोध पत्रिका के इस अंक में शिक्षा, संस्कृति एवं ज्ञान-विज्ञान के विषयों पर उत्कृष्ट विद्वानों के लेख-शोधलेख संकलित है। सर्वप्रथम डॉ. मनीषा शर्मा द्वारा लिखित **'सम्वत्सर चक्र'** लेख में सम्वत्सर की वैज्ञानिकता को उद्घाटित किया है। गोपीनाथ पारीक 'गोपेश' द्वारा लिखित **'विज्ञानं ज्ञानपूर्वकम्'** लेख में ज्ञान विज्ञान का बहुत सुन्दर समन्वय किया है। तत्पश्चात् डॉ. निरञ्जन साहू द्वारा लिखित **'अभिज्ञानशाकुन्तले समाजव्यवस्था'** शोधलेख में महाकवि कालीदास द्वारा अभिज्ञानशाकुन्तलम नाटक में सामाजिक व्यवस्था का चित्रण किया गया है। केशव मिश्रा द्वारा लिखित **'NEP 2020 : संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ'** शोधलेख में शिक्षण की संभावनाओं की चुनौतियों पर प्रकाश डाला है।

प्रो. पूर्णचन्द्र उपाध्याय द्वारा लिखित **'मानसिक पर्यावरण प्रदूषण व उसका निवारण : श्रीमद्भगवद्गीता की प्रासंगिकता'** नामक लेख में गीता में वर्णित पर्यावरणीय व्यवस्था का उल्लेख किया है। तत्पश्चात् श्रीमती कविता भारद्वाज द्वारा लिखित **'अध्यापक शिक्षा में एक नये युग की शुरुआत'** शोधलेख में शिक्षक एवं शिक्षण की नई दिशा को प्रकाशित किया गया है। मलखान मीणा द्वारा लिखित **'महान शिक्षाविद डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम एवं डॉ. राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारो का तुलनात्मक अध्ययन'** शोधलेख में डॉ. कलाम एवं डॉ. राधाकृष्णन के शैक्षिक दृष्टिकोण को उद्घाटित किया है। डॉ. रामप्रकाश एवं डॉ. यदु शर्मा द्वारा लिखित **'वर्तमान में जीवनमूल्यों की प्रासंगिकता'** शोधलेख में जीवनमूल्यों पर प्रकाश डाला है। श्रीमती अनिता शर्मा द्वारा लिखित **'गौतम बुद्ध एवं डॉ. अम्बेडकर के शैक्षिक विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता'** शोधलेख में भगवान् बुद्ध की शिक्षा और डॉ. अम्बेडकर की शिक्षा नीति को बताया है। तत्पश्चात् सुभाष मीना द्वारा लिखित **'वेदांत दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन'** शोधलेख में मानवतावादी दृष्टिकोण के विश्लेषणात्मक अध्ययन पर प्रकाश डाला है। डॉ. सीताराम दोतोलिया द्वारा लिखित **'जीवनयात्रा'** लेख में जीवनयात्रा को संस्कृत कविता के माध्यम से बताया है।

आशा है, सुधी पाठक इन्हें रुचिपूर्वक हृदयंगम करने हेतु उत्साहशील होंगे।

शुभकामनाओं सहित....

प्रधान संपादक - डॉ. मनीषा शर्मा

सम्वत्सर चक्र

डॉ. मनीषा शर्मा
प्राचार्य
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, जयपुर

सूर्यनारायण बोले कि साधारण मनुष्यों को मैं एक चमकता हुआ गोला सा दिखता हूं जो पृथिवी के चारों ओर फिरता है परन्तु विद्वान मुझको ब्रह्म की साक्षात मूर्ति मानते हैं और मेरे अनन्त तेज का भली प्रकार ध्यान करतेहुए चकित हो जाते हैं और अपनी वृत्ति को मुझमें लीन कर के सूर्यलोक से ऊपर के लोकों का अनुभवी दर्शन करतें हैं: जैसे द्वारपाल की आज्ञाविना कोई घर में नही घुस सकता वैसे ही मेरी सहायता विना ब्रह्मलोक की प्राप्ति दुर्लभ है जिनकी पहुंच मुझ तक नहीं होती है वह चन्द्रलोक तक जाकर फिर मर्त्युलोक में लौटआते हैं और चक्र मे रहते हैं। यह बचन वेद उपनिषद और महापुरुषों का सिद्ध किया हुआ है और ठीक है: मेरी मूर्ति के विचारने से प्रतीत होगा कि दिन रात का भाव मुझ मे नही जिससे काल का उन्मान किया जावे मैं नित्य एक रूप से अवस्थित हूं और अपने अनन्त तेज से पृथिवी चन्द्रमा और अन्य तारागणों को प्रकाश देता हूं और उष्णता पहुंचाता हूं जिनके द्वारा उनके सब कार्य सिद्ध होते हैं। अव जो मेरा संबंध पृथिवी के साथ है उसका वर्णन इस प्रकार है कि पृथिवी की एक घूम से दिन और रात्रि का भाव होता है अर्थात् उसका जो अर्थभाग सूर्य के सन्मुख आता है उसमे दिन भासता हैं और जो उसके दूसरे ओर होता है वहाँ रात्रि की प्रतीती होती है।

पृथिवी का धुरा चकई की तरह खडा हुआ नही फिरता शिशुमार (पानी के जन्तु) के समान तिर्छा होके चक्रवत फिरता है और उसके तिर्छेपन से दिन रात की घटत वढत होती रहती है। सूर्य और पृथिवी के आकारों के मध्य में बारह घरों के अन्दर पीले रंग के बारह चिन्ह दिखते हैं. वह दिन के घटे और बढे परिमाण को संवत्सरपर्यन्त जताते हैं. और इसी प्रकार पृथिवी के आकारों के बाहर बारा काले चिन्ह रात्रि के घटे ओर बढे परिमाण को बताते हैं अर्थात् दिन और रात दोनो का परिमाण ६० घड़ी अथवा २४ घंटे का है परन्तु इस समय के अन्तर जब दिन बढ़ता है तो रात घट जाती है और जब रात बढ़ती है तो दिन घट जाता है, मकर की संक्रान्ति में रात सबसे बड़ी और दिन सबसे छोटा होता है और

कर्क की संक्रान्ति में दिन सबसे बड़ा और रात सबसे छोटी होती है मेष और तुला की संक्रान्ति में दिन और रात्रि का परिमाण एक सा होता है।

काले चिन्हों के बाहर मेष वृषादि १२ राशियों की मूर्तियाँ इस चित्र में बनी हुई हैं और वह आकाश के उस देश को १२ कल्पित भागों पर विभक्त दिखाती हैं जिसमें पृथिवी सूर्य के चारों ओर चक्रवत् फिरती है। मूर्तियों के परस्पर भेद का कारण यह है कि ज्योतिषविद्या के सिद्धकर- निकले प्राचीन ऋषियों ने अपने पुरुषार्थ द्वारा संवत्सर पर्यन्त रात्रि के समय आकाश को देखा है और उसके पृथक देशों में तारों के समूह से १२ आकार बनते हुए पाये हैं जिनके अनुसार उन्होंने राशियों की मूर्तियां स्थापित की हैं और उनके नाम रखे हैं। १२ राशियों को १२ झन्डियों के समान जानना चाहिये कि उनके द्वारा पृथिवी से आकाश मार्ग नापा गया है परंतु इस काल में पुरुषार्थ और विचारशक्ति के निर्बल होने से मनुष्य ज्योतिष के सिद्धांतों को समझ नही सकते हैं। उसका शोधन तो कैसे कर सकें ? ज्योतिष ब्रह्मविद्या का अंग है और तत्ववित होने के लिये इसका विचारना आवश्यक है।

राशियों के बाहर चैत्र वैशाखादि मास चंद्रमा की गति के अनुसार दिखाये गये हैं और उनका समय राशियों से मिलान नही खाता अर्थात् चंद्रमास और राशियों का संबंध थोड़ा थोड़ा पलटता रहता है परंतु तीन वर्ष के अंत में दोनो का समय भेद जाता रहता है, जैसे सूर्य के पट चक्र में राशियों की १२ झंडियों का लगा होना ऊपर कहा गया है। इसी प्रकार चंद्रमा के खड़े चक्र की दिशा में २७ झंडिया जिनका नाम नक्षत्र है सिद्ध की गयी हैं और इन दोनों से आकाश की प्रत्येक देश का विभाग हो जाता है और सर्वग्रहों के स्थान निश्चित होते हैं। राशियों के पटचक्र पर चंद्रचक्र खड़ा होने के कारण सूर्यलोक से चद्रलोक ऊंचा कहा जाता है।

चन्द्र मास के बाहर की ओर षट् ऋतुओं के टुकड़े दिखलाये गये हैं जिनके मिलने से एक वर्ष बनता है और जिनका समय दो दो संक्रातियों के तुल्य है और रंग पृथक पृथक है, प्रथम वसंत का रंग पीला है क्योंकि उस ऋतु में जो सूर्य की किरणें पृथिवी पर पड़ती हैं वह पीले रंग की दिखती हैं और उनके अनुसार सरसों आदि के पीले रंग के फूल अत्यंत खिलते हैं।

दूसरी ग्रीष्मऋतु है जिसमे सूर्य की किरणों का रंग लाली लिये हुए होता है और सारी पृथिवी तप्ती हुई दिखलाई देती है।

तीसरी वर्षाऋतु है जिसके अन्दर सूर्य की किरणें धुंधली हो जाती हैं और वर्षा होकर सर्व वृक्ष और बूटियाँ धुल जाती हैं और विशे हरे रंग की दिखती हैं।

चौथी शरद ऋतु है जिसमे अन्नादिक पक जाते हैं और मठियाले रंग को धारण करते हैं।

पांचवी शिशिर ऋतु है जिसमे सूखीशीत पड़ती है और आकाश 'अत्यंत नीला दिखता है।

छटी हेमंत ऋतु है जिसमे वर्षा सहित शीत पड़ती है और आकाश जलवत भूरेरंग का भासता है। षट् ऋतुओं के रुप पंचतत्वों के विशेष और सामान्य भाव से इस प्रकार बनते हैं

ऋतु	विशेषभाव			सामान्यभाव	
वसन्त	आकाश	पवन	पृथिवी	अग्नि	जल
ग्रीष्म	आकाश	पवन	अग्नि	जल	पृथिवी
वर्षा	आकाश	अग्नि	जल	पवन	पृथिवी
शरद	आकाश	अग्नि	पृथिवी	पवन	जल
शिशिर	आकाश	जल	पृथिवी	पवन	अग्नि
हेमन्त	आकाश	पवन	जल	अग्नि	पृथिवी

ऋतुओं के चक्र के बाहर एक और चक बना हुआ है जिसके तीन भाग पृथक पृथक रंग के हैं और वह एक वर्ष के तीन समयों को दिखाते हैं। उनके नाम ग्रीष्म, वर्षा और शिशिर कहलाते हैं और प्रत्येक समय में दोदो ऋतु मिश्रित हैं अर्थात बसन्त और ग्रीष्म दोनों ग्रीष्मकाल में गिने जाते हैं वर्षा और शरद वर्षाकाल के अन्तरगत हैं। शिशिर और हेमन्त को मिलाकर शिशिरमात्र कहते हैं।इन समयों का विभाग चन्द्रमास के अनुसार सिद्ध हुआ है। सब से ऊपर वाले चक्र के दोभाग हैं जिनमें से एक लाल और दूसरा काले रंग का है। लालभाग उत्तरायण और कालाभाग दक्षिणायन को दिखाता है और प्रथम देवताओं का दिन और दितीय देवताओं का रात्री माना गया है। वास्तव में जब मेरा स्थान पृथिवी से उत्तर दिशा में होता है तब भूमण्डल की उत्तरवाली चोटी पर छः मास पर्यंत दिन रहता है और दक्षिणवाली चोटी पर छः मास रात्रि रहती है। इसी प्रकार जब मैं पृथिवी के दक्षिण की ओर होता हूं तब भूमण्डल की दक्षिण वाली चोटी पर छःमास का दिन और उत्तर वाली चोटी पर छःमास की रात्रि व्यतीत होती है।

इसी विधि से दिन और रात्रि के अवसर का भेद पृथिवी के मध्य देशों की ओर घटता जाता है और भारतवर्ष में बड़े से बड़ा दिन ३५ घड़ी का और छोटी से छोटी रात्रि २५ घड़ी की उत्तरायण में हो जाती है और दक्षिणायन मे रात्रि ३५ घड़ी की और दिन २५ घड़ी का हो जाता है।

दिन के बडे होने से मैं दीर्घ काल तक पृथिवी को तपाता हूं और इस कारण ग्रीष्मसमय बनता है, काल के अन्तर

रात्रि के अधिक होने से मेरी किरणें पृथिवी पर थोड़े समय पड़ती हैं जिस कारण शीत की वृद्धि हो जाती है, जिस समय दिन और रात्रि परस्पर तुल्य होते हैं तब उष्णता और शीत का समभाव रहता है और ३० घड़ी के प्रत्येक दिन और रात होते हैं उस समय मेरा स्थान पृथिवी की मध्य दिशा में समझना चाहिये।

मेरे प्रभाव से दो आयन, तीन समय और छःऋतु रचे जाते हैं रात्रि और दिनका विभाग सिद्ध होता है और शीत और उष्णता और वर्षा द्वारा अनेक प्रकार के अन्न की उत्पत्ति होकर प्राणियों का जीवन भूलोक मे बनता है और जगत् की सारी क्रिया सिद्ध होती हैं। भूमंडल के निवासियों का मलविक्षेप मुझमें प्रवेश नहीं करता क्योंकि मेरी शक्ति जिसका नाम पावक है सर्व अशुद्धियों को दग्ध कर देती है। मृतक देह का दाह संसार में चार प्रकार से होता है पवनदाह, अग्निदाह, जलदाह, और पृथिवीदाह उनमें से अग्निदाह से देह के परमाणु बहुत शीघ्र शुद्ध होकर अपने अपने तत्वों में जा मिलते हैं और इनसे किसी प्रकार की अशुद्धि और रोग नहीं फैलता और अन्य 'तीनप्रकार के दाहों से देह के परमाणु विकार को प्राप्त हो कर बहुत काल के पीछे अपने तत्वों में पहुंचते हैं और मृतक देह में जो रोग अथवा विकार होते हैं वह और स्थानों में फैल सकते हैं।

मैंने जो ऊपर आयनों का वर्णन किया है उसका संवन्ध मेरी स्थूल मूर्ति से है। चर्म दृष्टि रूपमात्र को दिखाती है परन्तु विचार और अनुभव से उत्तरायण और दक्षिणायन के अर्थ विलक्षण सिद्ध होते है। यदि यह माना जाए कि उत्तरायण के समय जो मनुष्य देह का त्याग करता है वह अवश्य ब्रह्मलोक में पहुंचता है और जो दक्षिणायन मे मृत्यु को प्राप्त होता है वह पितृलोक में जाता है तो संसार का पुरुषार्थ ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के निमित्त समय आधीन हो जाता है और ज्ञानी और अज्ञानी की अवस्थाओं में अन्तर नही रहता। ऐसी कल्पना अनिश्चय रूप और मिथ्या है। अब आप लोग मेरी सूक्ष्मगति को अध्यात्म रूप से विचारें कि मेरा उदय और अस्त प्रत्येक श्वासा में होता है और उन दोनों अवस्थाओं का वर्णन अग्नि और धूंआ, दिन और रात, शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष, उत्तरायण और दक्षिणायन आदि दो दो शब्दों के संयोग से महात्माओं ने किया है। प्रथम गति को अनुभव का स्वरूप और दूसरी को श्रुति का रूप जानना चाहिये। जिन महापुरुषों को धारणा द्वारा अनुभव सिद्ध हो जाता है वह बह्मलोक को प्राप्त होते हैं और जो श्रुति द्वारा संकल्प में बंधे रहते हैं उनकी ब्रह्मलोक तक पहुंच नहीं होती और उनका चन्द्रमंडल में प्रवेश होता है और संकल्प के बीज से जो उनमें सूक्ष्म रूप हो कर रहता है वह फिर मृर्त्युलोक में खिंच आते हैं। यही पित्रों का मार्ग कहलाता है।

सारांश यह है कि ज्ञान की अवस्था को उत्तरायण और अज्ञान की गति को दक्षिणायन का शब्द जताता है और बुद्धिमानों के लिये इतना ही वर्णन बहुत कुछ दर्शाता है।

विज्ञानं ज्ञानपूर्वकम्

गोपीनाथ पारीक गोपेश
अध्यक्ष
राजस्थान आयुर्वेद विज्ञान परिषद्

वेदों से ही भारतीय वाङ् मय की उत्पत्ति मानी है। भारतीय वाङ् मय में दर्शनों का विशेष महत्त्व है क्योंकि इनमें भारतीय संस्कृति के रूपमें जीवन के प्रति मानवीय दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। भारतीय आस्तिक दर्शनों में वेदान्त का अपना विशेष महत्त्व है, क्योंकि यह वेद के ज्ञान-विज्ञान को व्याख्यादित करता है। ऋग्वेद के सूक्तों मं ही ब्रह्म और माया के सम्बन्धों की सूचनायें मिलती है। फिर भी वास्तविक वेदान्त तो वेद के अन्तिम भाग उपनिषदों से प्रारम्भ होता है, जहाँ ब्रह्म, माया और जीव के विषय में विशिष्ट कल्पनायें कर विषय को प्रामाणिक सिद्ध करने का प्रयास किया गया है जो वस्तुतः स्तुत्य एवं सत्य की संचेतना से संयुक्त लगता है। यद्यपि ये उपनिषद् अनेक हैं किन्तु आदिशंकराचार्य ने इनमें ग्यारह उपनिषदों को मान्यता दी है। यह हमारा सौभागय है कि गीताप्रेस ने इन ग्यारह उपनिषदों के सटीक संस्करण सम्पादित कर प्रसारित किये हैं। इन उपनिषदों में वेन्दान्त का बोध मुख्य रूप से होता है। उपनिषदों का सारांश भगवद् गीता में आ गया है अतः इसे भी वेन्दान्त दर्शन का अंग ही माना गया है। उपनिषद् और गीता के इन्ही विचारों को बादराण वेदव्यास देव ने ब्रह्मसूत्र में श्रृंखलाबद्ध किया है। उपनिषद्, गीता और ब्रह्मसूत्र ये तीनों प्रस्थानत्रयी के नाम से जाने जाते हैं जिन पर प्रायः प्रत्येक वैष्णव आचार्यों ने अपने अपने मत के अनुसार भाष्य लिखे हैं। निम्बाकीचार्य ने इनमें भागवतमहापुराण को सम्मिलित कर प्रस्थान चतुष्टय नाम दिया है और चैतन्य महाप्रभु ने भागवत्, गीता और ब्रह्मसूत्र को ही प्रस्थानत्रयी की श्रेणी में रखा है। वेदों में तीन विषयों का वर्णन है, ये विषय है- कर्म, ज्ञान और उपासना। वेदों में मुख्यतया कर्मकाण्ड वर्णित है, तो उपनिषदों में ज्ञानकाण्ड है और उपासनाकाण्ड से दानों ही अनुस्यूत है। वेदान्त की विश्लेषणमयी परिभाषा में कहें तो ब्रह्म ही ज्ञान है और माया ही विज्ञान है।

आदिशंकराचार्य न प्रस्थानत्रयी पर व्याख्या लिखकर अपने अद्वैतमत का प्रवर्तन किया। 'ब्रह्मसूत्र' पर लिख इनका भाष्य 'शारीरिक भाष्य' के नाम से प्रसिद्ध है जिसने अद्वैत वेदान्त की पताका फहरा दी। कुमारिलभट्ट

की सम्मति के अनुसार शंकराचार्य ने वाचस्पति मिश्र से इस शारीरिक भाष्य पर टीका लिखवायी जो 'भामती' नाम से जानी जाती है। इस भामती पर भी अमलानछ ने 'कल्पतरू' तथा अप्पय दीक्षित ने 'परिमल' नामक टीकायें लिखी। इस शंकराचार्च (अद्वैतवेदान्तदर्शन) पर लिखे गये मधुसूदन सरस्वती का 'अद्वैत-सिद्धि', सदानन्द का 'वेदान्तसार' आदि ग्रन्थ भी प्रसिद्ध हैं, जिनमें इस ज्ञान-विज्ञान से सम्बन्धित बहुत सी चर्चायें की गयी हैं। वेदों के भाष्कार सायणाचार्य के अग्रज भ्राता माधवाचार्य (जो सन्यास के पश्चात् विद्यारण्य नाम से विख्यात हुये) ने तो 'सर्वदर्शनसंग्रह' नाम विशाल ग्रन्थ लिखकर अन्त में शंकर के अद्वैतदर्शन की ही पुष्टि की है। इस ग्रन्थ के अन्तर्गत यही सिद्ध किया गया है कि ब्रह्म ही ज्ञानरूप है तथा उसकी माया विज्ञानस्वरूपा है। ब्रह्म का स्वरूपलक्षण ही यही है - सत्य, ज्ञान और आनन्द। जगत् के जन्मादि का कारण होना शुद्ध ब्रह्म का तटस्थ लक्षण है क्योंकि ब्रह्म माया से विशिष्ट होने पर ही यह काम करता है।

प्रत्येक हृदय में ब्रह्म निवास करता है तो यह दृष्टि ही ज्ञान है। ब्रह्म और ज्ञान पर्याय ही हैं। ब्रह्म अपनी 'बहुस्याम्' कामना की पूर्ति के लिये ही वह माया का सहारा लेता है। माया के अन्दर ऊर्जा है वह ब्रह्म से ही प्राप्त होती है। ब्रह्म ऊर्जा है तो माया पदार्थ है, ब्रह्म ज्ञान है तो माया विज्ञान है। प्रो. श्री सिद्धेश्वर प्रसाद ने एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा था, जिसका नाम है-'ब्रह्मविज्ञानोपनिषद्' जो सर्वसेवासंघा प्रकाशन वाराणसी से सन् 1982 में प्रकाशित हुआ था। इस ग्रन्थ की भूमिका में लेखक लिखते हैं - 'ब्रह्मविज्ञानोपनिषद्' श्रुति (ब्रह्मविज्ञान), स्मृति (समाजविज्ञान) और विज्ञान (भौतिक विज्ञान) की साधना की त्रिवेणी है। इसके बिना सम्पूर्ण जीवन के पूर्ण शास्त्र या पूर्ण 'भावोद्वैतं सदा कुर्यात् क्रियाद्वैतं न कर्हिचित्' कथन पर पुनर्विचार आवश्यक है। इसी ग्रन्थ के सूत्र 'इत्थं समाज रचना ब्रह्मविज्ञानपुष्टिः' की व्याख्या में विद्वान् लेखक लिखते हैं- वेदान्तदर्शन रूप बदलने को माया का धर्म मानता है। इस माया के प्रभाव को नियंत्रित करने पर ही नये समाज की रचना संभव है, जिसमें नये मानव का प्रादुर्भाव हो सके। यह केवल ब्रह्मविद्या या केवल भौतिक विज्ञान की साधना से संभाव नहीं है। इसके लिये दानों की सह-साधना अनिवार्य है। भौतिकविज्ञान नये मानव के प्रादुर्भाव की भौतिक बाधाओं को दूर करेगा और ब्रह्मविद्या मनोवैज्ञानिक एवं मानसिक बाधाओं को दूर करेगी।

अमरकोष में ज्ञान-विज्ञान की परिभाषा हेतु कहा है - 'मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयोः' (5-6)। अर्थात् मोक्ष में निरत बुद्धि का नाम ज्ञान है और अन्यत्र (मोक्षोपयोगि बुद्धि को छोड़कर) शिल्प (कारीगरी) और शास्त्र में लगने वाली बुद्धि का नाम विज्ञान है। अन्य कई विद्वान शास्त्रीय ज्ञान को 'ज्ञान' तथा अनुभवजन्य ज्ञान को 'विज्ञान' नाम देकर दोनों के सामंजस्य की बात करते हैं। शंकराचार्य ने भी गीताभाष्य में शास्त्र तथा गुरुओं से

प्राप्त ज्ञान को ज्ञान तथा सीखी हुई वस्तुओं के व्यक्तिगत अनुभव को विज्ञान कहा है। 'अखण्डज्योति' नामक पत्रिका में इन्हें परा और अपना विद्या कहा है तथा कहा है कि ज्ञान विज्ञान की ये दो धारायें एक ही वृक्ष की दो टहनियाँ हैं। ये परस्पर दूध-पानी की तरह मिल सकती है। आत्मकलयाण के लिये ऐसा आवश्यक भी माना गया है (अगस्त 1991)। अतएव गोपालसहस्रनाम (139) में भगवान् श्रीकृष्ण को 'विज्ञान-ज्ञानसन्धान' कहा गया है। बिना ज्ञान के विज्ञान अन्धा है तो बिना विज्ञान के ज्ञान पंगु है। गीता के सप्तम अध्याय का तो नाम ही 'ज्ञानविज्ञानयोग' ही है। इस ज्ञान-विज्ञान की व्याख्या 'साधकसंजीवनी' में रामसुखदासजी महाराज इस प्रकार करते हैं- 'परा तथा अपरा प्रकृति की स्वतन्त्र सत्ता नहीं है-यह ज्ञान है और परा-अपरा सब कुछ भगवान् ही है - यह विज्ञान है। अतः अहं सहित सब कुछ भगवान् ही है - यही विज्ञान सहित ज्ञान है। इस ज्ञान में अखण्ड रस है, पर 'विज्ञान' में प्रतिक्षण वर्धमान रस है, क्योंकि विज्ञान समग्रता का वाचक है। समग्रता का तात्पर्य यह है कि जड़-चेतन, सत्-असत्, परा-अपरा, क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ आदि जो कुछ भी है, वह सब भगवान् का ही स्वरूप है।

परमहंस श्री अगड़ानन्दजी ज्ञान-विज्ञान की यह परिभाषा प्रस्तुत करते हैं-'परमतत्त्व परमात्मा की प्रत्यक्ष जानकारी का नाम ज्ञान है और महापुरुष को एक साथ सर्वत्र कार्य करने की जो क्षमता मिलती है, वह विज्ञान है। उसकी इस उत्तम कार्यप्रणाली को ही विज्ञान कहते हैं।'

रामानुजाचार्य ने अपने गीताभाष्य में लिखा है कि -यहाँ ज्ञान और विज्ञान शब्दों का अभिप्राय वेदान्त के ज्ञान और सांख्य के विस्तृत ज्ञान से है। शंकराचार्य ने ज्ञान की व्याख्या करते हुये इसे शास्त्रों और गुरुओं से प्राप्त आत्मा तथा अन्य वस्तुओं का ज्ञान और विज्ञान को इस प्रकार सीखी हुई वस्तुओं का व्यक्तिगत अनुभव बताया है। रामानुज की दृष्टि में ज्ञान का सम्बन्ध आत्मस्वरूप या आत्मा की प्रकृति से है और विज्ञान का सम्बन्ध आत्मविवेक या आत्मा के विभेदात्मक ज्ञान से है। यहाँ पर दिये गये अनुवाद में ज्ञान को आध्यात्मिक ज्ञान और विज्ञान को तार्किक ज्ञान माना गया है। श्रीधर ने इन दोनों व्याख्याओं का समर्थन किया है। - डॉ. राधाकृष्णन्

आयुर्वेद के आचार्य चरक ने भी स्थान स्थान पर ज्ञान और विज्ञान की चर्चा की है। विमानस्थान के परिषद् के प्रसंग में ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न विद्वानों की परिषद् को ज्ञानवती परिषद् कहा है। यहाँ ज्ञान से विवेकपूर्ण शास्त्रीय ज्ञान तथा विज्ञान से विशिष्ट ज्ञान या अनुभव पूर्ण ज्ञान का ग्रहण किया है। चिकित्सा में इन दोनों की अनिवार्यता सिद्ध की गयी है। जैसे जैसे शास्त्रीय ज्ञान व्यवहार में आता जाता है वैसे वैसे अनुभव के विज्ञान में वृद्धि होती जाती है। मनुस्मृति का यह श्लोक स्मरण रखने योग्य है-

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति।
तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते।। - मनुस्मृति 5-27

मानस रोगों के उपचार में ज्ञान-विज्ञान का विशेष महत्त्व है। आयुर्वेदीय जगत् के मान्य विद्वान् प्रो. श्री रामहर्ष सिंह का यह वक्तव्य इस प्रसंग में बड़ा उपयोगी होगा - वस्तुतः भारतीय दार्शनिक तत्त्व ज्ञान के उपरान्त तत्त्वानुभूति के लिये तत्पर रहते थे। वे केवल तत्त्व ज्ञान मात्र से संतुष्ट नहीं रहते थे। आचार्यो ने ज्ञान तथा ज्ञान की अनुभूति जिसे विज्ञान भी कहा गया है में सर्वदा भेद किया है। श्री शंकराचार्य ने स्वयं ज्ञान-विज्ञान का अन्तर स्पष्ट करते हुये कहा है कि ज्ञान का तात्पर्य है शास्त्रों से या आचार्यों से आत्मा आदि पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करना और विज्ञान का अर्थ है उस ज्ञात पदार्थ का उसी रूप में स्वयं अनुभव करना। इस प्रकार की स्वानुभूमि सदा आनन्दमय मानी जाती है। ऋषियों ने इसी अनुभूति के लिये योग विज्ञान का आविष्कार किया । कभी कभी योग शब द से भी वही अर्थ लिया जाता है, जो विज्ञान शब्द से यहाँ लिया गया है। श्री शंकराचार्य की भाषा में अनुभवयुक्त ज्ञान ही विज्ञानसहित ज्ञान है और वही योग है - 'विज्ञानसहितं स्वानुभवसंयुक्तम्' (गीता शांकर भाष्य)। भारतीय परम्परा का लक्ष्य ज्ञान प्राप्ति मात्र नहीं अपितु विज्ञान प्राप्ति भी है। गीता में विज्ञान सहित गुह्यतम ज्ञान को मोक्ष का साधन बताया गया है -

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवल्ख्याम्यनसूयवे।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।। -गीता 9-1

अर्थात् हे अर्जुन! तुझ दोष दृष्टि रहित भक्त के लिये इस परम गोपनीय विज्ञानसहित ज्ञान को पुनः भली भाँति कहूँगा, जिसके जानकर तू दुःखरूप संसार से मुक्त हो जायेगा। -आयुर्वेदीय मानस विज्ञान

ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धित बहुत से प्रसंग आकर-ग्रन्थों में हमें देखने को मिलते हैं, उन सबका प्रसंग के अनुसार तात्पर्य समझ लेना चाहिये। इस सम्बन्ध में सर्वाधिक उपयोगी ग्रन्थ श्रीमद् भगवद् गीता है। अतः 'गीता सुगीता कर्तव्या'। कहते हैं कि परमाणु बम के जनक अमरीकी वैज्ञानिक ओपेनहाइमर को भी इस भगवद् गीता से ही शान्ति - समाधान मिला था।

गीता को पढ़ने के लिये उन्होंने पहले संस्कृतभाषा का ज्ञान प्राप्त किया था। तब ही तो हमारे पूज्य गुरुवर्य आचार्य डॉ. श्री नारायण जी शास्त्री काङ्कर कहा करते थे-

अष्माकं भारतीयानां, यदधीनाऽस्ति संस्कृतिः।
सा भाषा संस्कृतं सर्वैः, पठनीया सदा जनैः।।

शुभं भूयात्।

अभिज्ञानशाकुन्तले समाजव्यवस्था

डॉ. निरञ्जनसाहुः
प्राचार्यः - प्राच्य विद्यापीठम् एवम् उच्चाध्ययनसंस्थानम्, शाहपुरा
सेवानिवृत्तः, प्राचार्यः, सास्कृतशिक्षाविभागः
०९, विद्याविहारः, कायडमार्गः, अजमेरम्, राजस्थानम्।

महाकविषु महाकविकालिदासः श्रेष्ठः। ध्वन्यालोककारेणानन्दवर्धनेन प्रोक्तं यत्- येनास्मिन्नकविपरम्परावाहिनि संसारे कालिदासप्रभृतयः महाकवयो द्वित्राः पञ्चषा एव वा महाकवय इति गण्यन्ते। अस्य महाकवेः प्रशंसायां लौकिकोऽयं श्लोक : लोके प्रसिद्धः। महाकविषु कविकालिदासः प्रशस्यतमः।

पुष्पेषु जातिः नगरीषु काशी नदीषु गङ्गा नृवरेषु रामः।
नारीषु रम्भा पुरुषेषु विष्णुः काव्येषु माघ; कविकालिदासः॥

पाठभेदाः दृश्यन्ते - पुष्पेषु चम्पा नगरीषु लङ्का। पुष्पेषु मल्ली नगरीषु दिल्ली इति।

पुरा कवीनां गणनाप्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठितः कालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्य कवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव।।

वस्तुतः अद्यापि संस्कृतजगति कालिदासेन समः कविः न विद्यते अतः अङ्गुलीषु अनामिकाङ्गुलीनाम सार्थकं सञ्जातम्।

अस्य कवेः सप्तरचनासु अभिज्ञानशाकुन्तलं सर्वश्रेष्ठम्। अतः विद्वद्भिः भणितं यत्

"कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञानशाकुन्तलम्। तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्" पुनश्च विदुषां मनसि नाटकनामस्मरणमात्रेणैव श्लोकोऽयं मानसपटले स्वतः परिस्फुरति यत्-

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला, तत्र रम्यश्चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्।

नाटकेऽस्मिन् महाभारतस्य आदिपर्वणः शकुन्तलोपख्यानकथा विद्यते। अत्र नायकः महाराज : दुष्यन्तः, नायिका च शकुन्तला। रसः शृङ्गारः। अस्य नाटकस्य व्युत्पतिः यथा-

१- अभिज्ञायते अनेन इति अभिज्ञानम्। अभि + ज्ञा + ल्युट् शकुन्तलामधिकृत्य कृतं नाटकम् अभिज्ञानशाकुन्तलम्।
२- अभिज्ञानप्रधानं शाकुन्तलम् अभिज्ञानशाकुन्तलम्। शाकपाथर्विादीनां सिद्धये उत्तरपदलोपस्योङ्ख्यानम्।
३- अभिज्ञानसहितं शाकुन्तलम् अभिज्ञानशाकुन्तलम्। उत्तरपदे सहितस्य लोपः.

४- अभिज्ञानस्मृतं च तत् शाकुन्तलं च इति अभिज्ञानशाकुन्तलम्।

५- अभिज्ञानेन स्मृता अभिज्ञानस्मृता। अभिज्ञानस्मृता शकुन्तला यस्मिन् नाटके तदभिज्ञानशाकुन्तलम्।

६- अभिज्ञानेन इति मुद्रिकया ज्ञाता स्मृता शकुन्तला। शकुन्तलामधिकृत्य कृतं नाटकम् अभिज्ञानशाकुन्तलम्।

अस्य प्रसिद्धस्य नाटकस्य समाजे महान् प्रभावः दृश्यते । समाजः सम् अज् घञ् । समूहः। अज्-गतौ। ये गत्यर्थकधातवः ते ज्ञानार्थकाः भवन्ति। यस्मात् सम्यक् ज्ञानं लभते सः समाज इति ज्ञातव्यः। अत्र प्रश्नः ? केषां समाजः ? मनुष्याणां समाजः। नाटकमिदं मनुष्यसमाजस्य कृते मार्गदर्शकं विद्यते।

१. प्राणिहिंसा न करणीया।

प्रथमोऽङ्के महाराजदुष्यन्तस्य मृगस्योपरि बाणक्षेपणस्य आश्रमवासिभिः विरोधः कृतः । आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यः न हन्तव्यः।

न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन्, मृदुनि कुसुमशरीरे पुष्पराशाविवाग्निः । १ / १०

२. स्वाभाविकसौन्दर्यस्य महत्त्वम्-

शकुन्तलायाः स्वाभाविकसौन्दर्यम्-

सरसिजनमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्, मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी, किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।। १ / १८

एषा शकुन्तला मुनिकन्या सत्यपि रमणीया प्रतिभाति। इयं कन्या वल्कलेनापि मनोहारिणी दृश्यते। महाकविः अर्थान्तरन्यासालंकारेण वर्णयति यत्- मधुराणाम् आकृतीनां मण्डनं न अर्थात् भूषणस्यावश्यकता नास्ति। वस्तुतः यत् स्वाभाविकरमणीयं तत् रमणीयं भवत्येव तत्र मण्डनस्य ॥वश्यकता न भवति। यथा चन्द्रः कलङ्केन मलिनः सन्नपि शोभां विस्तारयति। अतः वक्तुं शक्यते रम्याणां सर्वमेव मण्डनमेव भवति।

शकुन्तलां प्रति प्रेमासक्तः सन् राजा तथा अनसूयामुखात् शकुन्तलायाः जन्मकथां श्रुत्वा पुनः भणति -

मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य सम्भवः। न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात्।। १/२२

मानवलोकस्त्रीषु एतादृशं सौन्दयं न सम्भवति। वस्तुतः अनुपमा सुन्दरी शकुन्तला एवास्ति। यथा कान्तिमती ज्योतिः वसुधातलात् न उदेति।

प्रियम्वदा वदति- प्रत्येकं युवत स्वानुरूपं वरं वृणुते - यथा वनज्योत्स्ना अनुरूपेण पादपेन सङ्गता अपि नाम एवम् अहमपि आत्मनः अनुरूपं वरं लभेय।

३- चतुथोऽङ्के अनसूया-प्रियम्वदयोः वार्तालापे शकुन्तला - दुष्यन्तयोः मेलने तातः कश्यपः किं चिन्तयिष्यति?

अनसूया भणति-

गुणवते कन्यका प्रतिपादनीया इति अयं तावत् प्रथमः सङ्कल्पः । तत् यदि दैवं संपादयति ननु अप्रयासेन कृतार्थ : गुरुजनः।

महाकविः कालिदासः समाजाय उपदिशति यत् गुणवते चरित्रवते वराय कन्या प्रदेया। इति मातापित्रोः अयं प्रथमः संकल्पो भवति। यदि एतत् कार्यं दैव:भाग्यं संपादयति। तर्हि परिवारजनाः सुखिनः भवन्ति । अत्र भाग्येन शकुन्तलादुष्यन्तयोः मेलनं संजातम्। अनेन महर्षिकण्वस्य कृते आनन्दस्य विषयः। अवश्यं सः प्रसन्नो भविष्यति।

४- **गान्धर्वविवाहः-**

तृतीयेऽङ्के शकुन्तला मेलनाद् बिभेति

शकुन्तला - पौरव, रक्ष विनयम्। मदनसंतप्ताऽपि न खल्वात्मनः प्रभवामि।

राजा – भीरु, अलं गुरुजनभयेन। दृष्ट्वा ते विदितधर्मा तत्र भवान्नात्र दोषं ग्रहीष्यति कुलपतिः।

अपि च —

गान्धर्वेण विवाहेन बह्व्यो राजर्षिकन्यकाः। श्रूयन्ते परिणीतास्ताः पितृभिश्चानुमोदिताः।। ३ / २०

५- **अतिथिसेवा-**

अतिथिसेवा अस्माकं प्रमुखं कत्तव्यम्। उपनिषदि प्रोक्तम् अतिथिदेवो भव। अतिथिः देवसदृशः भवति। सर्वादौ तस्य सेवा करणीया। अत्र नाटके चतुर्थेऽङ्के दुर्वासामहर्षेः सेवां शकुन्तला न कृतवती। एषः दुर्वासाः सुलभकोपो महर्षिः। तथा शप्त्वा वेगबलोत्फुल्लतया दुर्वारया गत्या प्रतिनिवृत्तः।

आः अतिथिपरिभाविनि !

विचिन्तयन्ती यमन्यमानसा, तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम्।
स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन्, कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव। ४ / १

६- दुष्यन्तः- अपि नाम कुलपतेरियमसवर्णक्षेमा स्यात्-

असंशयं क्षत्रपरिग्रहक्षमा, यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः।
सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु, प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः ।। १/२०

विदूषकः- तत् खलु **रमणीयं नाम** यत् भवतः अपि विस्मयम् उत्पादयति।

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै-रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव न तद्रूपमनघं न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधि :।। २ / १०

७- करग्रहणम्–

विदूषकः - नीवारषष्ठभागम् अस्माकम् उपहरन्तु-

दुष्यन्तः - **यदुत्तिष्ठति वर्णेभ्यो नृपाणां क्षयि तत्फलम्।**
तपःषड्भागमक्षय्यं ददत्यारण्यका हि नः ।। २/१३

ब्राह्मणादिवर्णेभ्यः यत् कररूपेण आगच्छति तत् फलं नश्वरमस्ति परन्तु अरण्यवासिनः मुनयः अस्मभ्यमविनश्वरमेव मुनीनां तपसः षड्भागं एव ददति - अर्थात् मुनीभ्यः ऋषिभ्यः कदापि करः न ग्रहणीयः - एतत् अक्षयं भवति।

८- नृपस्य प्रतिष्ठाद्वयम्-

परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य मे। समुद्ररशना चोर्वी सखी च युवयोरियम्।।

मम कुलस्य प्रतिष्ठाद्वयम् एका - सागरमेखला पृथिवी, द्वितीया – एषा शकुन्तला।

९- अथवा लोकतन्त्राधिकार :

भानुसकृद्युक्ततुरङ्ग एव, रात्रिन्दिवं गन्धवहः प्रयाति।
शेष : सदैवाहितभमिभारः, षष्ठांशवृत्तेरपि धर्म एषः ।। ५ / ४

१०- सुखानि दुःखानि चक्रवत् परिवर्तन्ते - प्रभातवर्णना-

यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीनामाविष्कृतोऽरुणपुर : सर एकतोऽर्कः।
तेजोद्वयस्य युगपद् व्यसनोदयाभ्यां, लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु ।।

सुखदुःखयोः समभावः भवितव्यः।

प्रियंवदा - सुशिष्यपरिदत्ता इव विद्या अशोचनीया असि मे संवृत्ता।

शकुन्तलाप्रसंगे

दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधाना भूतये भुवः। अवेहि तनया ब्रह्मन्नग्निगर्भा शमीमिव।। ४/४

विवाहितापुत्री बहुकालपर्यन्तं पितृगृहे न स्थापनीया। पतिगृहं सा यथाकालं प्रेषणीया।

११- गृहस्थाश्रमव्यवस्था-

काश्यपः - **यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया,**
कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमहो स्नेहादरण्यौकसः,
पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविश्लेषदु : खैर्नवैः।। ४ / ६

पुत्री - वियोगे गृहिणः सुतरां दुःखिताः भवन्ति।

शकुन्तलायाः पतिगृहगमने अरण्यपरिवेशः शोकाकुलः इति कविः वर्णयति-

उद्गलितदर्भकवला : मृगाः, परित्यक्तनर्तना मयूराः ।
अपसृतपाण्डुपत्राः मुञ्चन्ति अश्रु इव लताः ।। ४ / १२

१२- समाजं प्रति पर्यावरणसंरक्षणाय सन्देश :-

प्रथमोऽङ्के अनसूया शकुन्तलां वदति - हला शकुन्तले ! त्वत्तोऽपि तातकाश्यपस्याश्रमवृक्षकाः प्रियतरा इति तर्कयामि। येन नवमालिकाकुसुमपेलवाऽपि त्वमेतेषामालवालपूरणे नियुक्ता।

शकुन्तला - न केवलं तात नियोग एव। अस्ति मे सोदरस्नेहोऽप्येतेषु।

इतोऽनुमीयते यत् पादपेषु लतासु च महान् स्नेहः।

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या, नादत्ते प्रियमण्डनापि भवता स्नेहेन या पल्लवम् ।
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः, सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।। ४/९

अत्र वृक्षाणां छेदः न करणीयः। कुसुमप्रसूतिसमये जन्मोत्सवः परिपाल्यते। इति संदेशः। उत्सवप्रियो हि लोकः।

१३- तत्र परिग्रहीता दुष्यन्तः समुपस्थितः नास्ति, अतः शकुन्तलां पतिगृहं प्रति प्रापयतः शिष्यस्य शाङ्गरवस्य माध्यमेन दुष्यन्तं प्रति स्वसंदेशं प्रेषयति भगवान् कण्वः-

अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मनः,
स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्तिं ताम् ।
सामान्य प्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया,
भाग्यायत्तः परं न खलु तद्वाच्यं वधूबन्धुभिः ।। ४/१७

तपस्विनां निश्छलतां, आत्मनः उच्चकुलं, ममानुमतिं विना, अस्याः स्नेहप्रवृत्तिं सम्यक् विचार्य अन्यदारैः सह यथा व्यवहारः भवता क्रियते तथा व्यवहार : अनया शकुन्तलया समं भवता करणीयः एव। ततः परं भाग्यायात्तं सर्वमिति भाव्यम्। विषयेऽस्मिन् वधूबन्धुभिः सह चर्चा न करणीयाः। विषयेऽस्मिन् मम न कापि आपत्तिः भविता।

१४- कण्वमुनिः वनवासी तपस्वी सन्नपि लौकिकज्ञः आसीत्।

काश्यपः - शकुन्तलां विलोक्य। वत्से ! त्वमिदानीमनुशासनीयासि। वनौकसोऽपि सन्तो लोकिकज्ञाः वयम्।

पतिकुले त्वया कीदृशः व्यवहार : करणीय :-

शुश्रूषस्व गुरून् कुरु, प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने,

भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मास्म प्रतीपं गमः ।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने, भाग्येष्वनुत्सेकिनी,
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामा कुलस्याधयः ।। ४/१८

संसारे एतादृश:व्यवहारः स्याच्चेत् संयुक्तपरिवाराः अभविष्यन्। समाजं प्रति संयुक्तपरिवाराय संदेश : । सख्यौ- यदि नाम स: राजा प्रत्यभिज्ञामन्थरः भवेत् तदा तस्मै इदम् आत्मनाभिधेयाङ्कितम् अङ्गुलीयकं दर्शय स्नेहः पापशङ्की।

१५- **वानप्रस्थाश्रमः-**

शकुन्तला- तातः! कदा नु भूयः तपोवनं प्रेक्षिष्ये।

भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी, दौषन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य ।
भर्त्ता तदर्पितकुटुम्बभरेण सार्धम्, शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमेऽस्मिन् ।। ४/२०

शिवास्ते पन्थानः सन्तु।

१६- **अर्थो हि कन्या परकीय एव, तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः ।**
जातो ममायं विशद : प्रकामं, प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा ।।४ / २२

कन्यादानम् – कन्यायै दानम्।

१७- **परोपकार :-**

भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमै- र्नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः ।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः, स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् ।। ५/१२

१८- **विवाहात् पूर्वं सहवासः न करणीयः । समाजं प्रति संदेश :-**

अतः परीक्ष्य कर्तव्यं विशेषात् संगतं रहः । अज्ञातहृदयेष्वेव वैरीभवति सौहृदम् ।। ५/२४

१९- शारद्वतः वदति राजानं प्रति - पत्न्याः उपरि पत्युः अधिकारो विद्यते। श्वसुरालये स्थातव्यम्।

तदेषा भवतः कान्ता त्यज वैनां गृहाण वा । उपपन्ना हि दारेषु प्रभुता सर्वतोमुखी ।। ५ / २६

२० - संसारे कुत्र कथं व्यवहारः आचरणीयः।

प्राणानामनिलेन वृत्तिरुचिता सत्कल्पवृक्षे वने, तोये काञ्चनरेणुकपिशे धर्माभिषेकक्रिया ।
ध्यानं रत्नशिलातलेषु विबुधस्त्रीसन्निधौ संयमो, यत्काङ्क्षन्ति तपोभिरन्यमुनयस्तस्मिंस्तपस्यन्त्यमी ।। ७ / १२

२१- मारीचस्य आशीर्वादवाक्यम्- राजानं प्रति-

दिष्ट्या शकुन्तला साध्वी सदपत्यमिदं भवान्। श्रद्धा वित्तं विधिश्चेति त्रितयं तत् समागरम्।। ७ / २९

" NEP 2020: संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ "

केशव मिश्रा
(सहायक आचार्य)
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, शाहपुरा बाग,जयपुर

सारांश -

भारतीय शैक्षिक ढाँचा सबसे महत्वपूर्ण ढाँचों में से एक है और इसका उद्देश्य दुनिया के सभी बच्चों के लिए बुनियादी शिक्षा को अपरिहार्य बनाना है। सुदृढीकरण के लिए प्रशिक्षण को सबसे मूल्यवान संपत्ति माना जाता था। उन्हें गरीबों, आर्थिक रूप से कमजोर और सामाजिक रूप से हतोत्साहित लोगों के दरवाजे तक पहुंचना चाहिये। अतः शिक्षा इसका सशक्त माध्यम है शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य को समर्थ बनाया जा सकता है ज्ञान के परिदृश्य में पूरा विश्व तेजी से परिवर्तित हो रहा है।आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस जैसी चीजों ने एक ओर विश्व में कामगारों की जगह मशीनों को जगह देने की शुरुआत कर दी है तो दूसरी ओर साइंस तकनीकी और गणित के क्षेत्र में ऐसे कुशल कामगारों की जरूरत और मांग बढ़ती जा रही है जो विज्ञान, समाज विज्ञान और मानविकी जैसे विविध विषयों में योग्यता रखते हो ।अतः इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु एक सशक्त नीति की भी आवश्यकता है।

भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा अगस्त माह में इससे संबंधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 जारी की गई। शिक्षा पर राष्ट्रीय नीति 1986 में बनाई गई थी और 1992 में संशोधित की गई थी। तब से कई बदलाव हुए हैं जो नीति में संशोधन की मांग करते हैं। एनईपी 2020-21वीं सदी की पहली शिक्षा नीति है और यह चौंतीस वर्षीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) 1986 की जगह लाई गई है। इसकी इक्विटी, गुणवत्ता, वहनीयता और जवाबदेही के मूलभूत स्तंभों पर निर्मित, यह नीति सतत विकास के लिए 2030 एजेंडा के अनुरूप है। इसका उद्देश्य भारत को एक जीवंत ज्ञान समाज और वैश्विक ज्ञान महाशक्ति के रूप में बदलना है, जिसमें स्कूल और कॉलेज शिक्षा दोनों को अधिक समग्र, लचीला, बहु-विषयक, 21 वीं सदी की जरूरतों के अनुकूल बनाया गया है और इसका उद्देश्य प्रत्येक छात्र की अद्वितीय क्षमताओं को सामने लाना है।आधुनिक भारत में नई शिक्षा नीति का विशिष्ट महत्व है। इनसे रचनात्मक और नवाचार को महत्व मिलेगा ।शिक्षा नीति के समक्ष एक महत्वपूर्ण चुनौती विश्वविद्यालयों और

कॉलेजों में प्रोफेसरों की जवाबदेही और प्रदर्शन सुनिश्चित करने से संबंधित सूत्र को लागू करना भी है। आज, दुनिया के कई विश्वविद्यालयों में, अपने साथियों और छात्रों के प्रदर्शन के आधार पर शिक्षकों के प्रदर्शन का मूल्यांकन किया जाता हैं।

यह कहा जा सकता है कि NEP2020 सरकार द्वारा शिक्षा प्रणाली में एक बड़े बदलाव का संकेत देता है, लेकिन इसमें कई चुनौतियाँ भी हैं। उल्लेखनीय है कि इन चुनौतियों से निपटने का प्रयास पूर्व में भी किया जा चुका है, लेकिन उपलब्धियाँ सराहनीय नहीं रही हैं। इस संदर्भ में, कुछ सुझावों को यहां लागू करने की आवश्यकता है। इस नीति के तहत, शिक्षा अभियान को सफल बनाने के लिए सरकार, नागरिकों, सामाजिक संस्थाओं, विशेषज्ञों, अभिभावकों, समुदाय के सदस्यों को अपने स्तर पर काम करना चाहिए।

मूल शब्द - राष्ट्रीय शिक्षा नीति,चुनौतियां ,संभावनाएं।

प्रस्तावना

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी 2020), जिसे 29 जुलाई 2020 को भारत के केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा अनुमोदित किया गया था, भारत की नई शिक्षा प्रणाली के दृष्टिकोण को रेखांकित करती है। नई शिक्षा नीति 2020 ने पिछली राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, की जगह ले ली है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्राथमिक शिक्षा से उच्च शिक्षा के साथ-साथ ग्रामीण और शहरी भारत दोनों में व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए एक व्यापक रूपरेखा तैयार करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य 2021 तक भारत की शिक्षा प्रणाली को बदलना है और यह नीति 2020 भारत को बदलने में सीधे प्रकार से योगदान प्रदान करती है और भारतीय लोकाचार में निहित शिक्षा प्रणाली को देखती है। इसका उद्देश्य धर्म, लिंग, जाति या पंथ के किसी भी भेदभाव के बिना, सभी को आगे बढ़ने और विकसित होने के लिए एक समान मंच प्रदान करना और सभी को उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करके मौजूदा जीवंत ज्ञान समाज को बनाए रखना और उसकी देखभाल करना है। यह भारत को वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनाने की दिशा में भी एक कदम है।

इस नीति में यह परिकल्पना की गई है कि हमारे संस्थानों के समान पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र को, छात्रों में मौलिक कर्तव्यों के प्रति सम्मान की भावना पैदा करनी चाहिए और संवैधानिक मूल्यों, अपने देश और एक बदलती दुनिया के साथ एक संबंध पैदा करना चाहिए। इस नीति का दृष्टिकोण शिक्षार्थियों के बीच ज्ञान, कौशल, आत्मविश्वास, बुद्धि और कर्म के साथ न केवल विचार बल्कि मूल्यों और दृष्टिकोणों में भी विकास करना है, जो मानव अधिकारों, सतत विकास और जीवन का समर्थन करते हैं।

अध्ययन का उददेश्य

(1) NEP 2020 के बारे में जानना।

(2) NEP 2020 के लक्ष्यों एवं सिद्धान्तों के बारे में जानना।

(3) NEP 2020 की संभावनाओं के बारे में जानना

(4) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की चुनौतियो के बारे में जानना

शोध विधि

यह शोधपत्र द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से लिखा गया है। इस हेतु विभिन्न रिपोर्ट, समाचार पत्रों एवं पुस्तकों से तथ्यों का संकलन किया गया है।

NEP 2020 एक परिचय

नई शिक्षा नीति शिक्षार्थियों के एकीकृत विकास पर केंद्रित हैं।

यह 10+2 सिस्टम को 5+3+3+4 संरचना के साथ बदल देता है, जिसमें 12 साल की स्कूली शिक्षा और 3 साल की प्री-स्कूलिंग होती है, इस प्रकार बच्चों को पहले चरण में स्कूली शिक्षा का अनुभव होता है।

परीक्षाएं केवल 3, 5 और 8वीं कक्षा में आयोजित की जाएंगी, अन्य कक्षाओं का परिणाम नियमित मूल्यांकन के तौर पर लिए जाएंगे। बोर्ड परीक्षा को भी आसान बनाया जाएगा और एक वर्ष में दो बार आयोजित किया जाएगा ताकि प्रत्येक बच्चे को दो मौके मिलें।

नीति में पाठ्यक्रम से बाहर निकलने के अधिक लचीलेपन के साथ स्नातक कार्यक्रमों के लिए एक बहु-अनुशासनात्मक और एकीकृत दृष्टिकोण की परिकल्पना की गई है।

राज्य और केंद्र सरकार दोनों शिक्षा के लिए जनता द्वारा अधिक से अधिक सार्वजनिक निवेश की दिशा में एक साथ काम करेंगे, और जल्द से जल्द जीडीपी को 6% तक बढ़ाएंगे।

संभावनाएं

नई शिक्षा नीति सीखने के लिए पुस्तकों का बोझ बढ़ाने के बजाय व्यावहारिक शिक्षा को बढ़ाने पर ज्यादा केंद्रित है।

एनईपी यानी नई शिक्षा निति सामान्य बातचीत, समूह चर्चा और तर्क द्वारा बच्चों के विकास और उनके सीखने की अनुमति देता है।

एनटीए राष्ट्रीय स्तर पर विश्वविद्यालयों के लिए एक आम प्रवेश परीक्षा आयोजित करेगा।

छात्रों को पाठ्यक्रम के विषयों के साथ-साथ सीखने की इच्छा रखने वाले पाठ्यक्रम का चयन करने की भी स्वतंत्रता होगी, इस तरह से कौशल विकास को भी बढ़ावा मिलेगा।

सरकार एनआरएफ (नेशनल रिसर्च फाउंडेशन) की स्थापना करके विश्वविद्यालय और कॉलेज स्तर पर अनुसंधान और नवाचारों के नए तरीके स्थापित करेगी।

यह सीखने वाले की आत्म-क्षमता, संज्ञानात्मक कौशल पर जोर देता है। यह एक बच्चे को अपनी प्रतिभा विकसित करने में मदद करेगा यदि वे जन्मजात प्रतिभावान हैं तो।

पहले छात्रों के पास अध्ययन के लिए केवल एक ही विषय चुनने का विकल्प था, लेकिन अब अलग-अलग विषय चुन सकते हैं, उदाहरण के लिए – गणित के साथ-साथ कला और शिल्प का भी विकल्प चुन सकते हैं।

हर विषय पर समान रूप से व्यवहार करने पर जोर।

इस नीति का मुख्य उद्देश्य छात्रों के बीच नवीन विचारों के समावेश के साथ सहभागिता, महत्वपूर्ण सोच और तर्क करने की क्षमता को विकसित करना है।

स्नातक पाठ्यक्रमों में कई निकास विकल्प छात्रों को अनुभव से लाभान्वित करने और इस बीच कहीं काम करने से कौशल प्राप्त करने और फिर बाद में जारी रखने का अवसर प्रदान करेंगे।

नई शिक्षा नीति किसी भी विषय को सीखने के व्यावहारिक पहलू पर केंद्रित है, क्योंकि यह अवधारणा को समझने का एक बेहतर तरीका माना जाता है।

2040 तक सभी संस्थान और उच्च शिक्षण संस्थान बहु-विषयक बन जाएंगे।

NEP 2020 के तहत प्रमुख पहलें:

उभरते भारत के लिये PM स्कूल (SHRI): PM-SHRI योजना का उद्देश्य न्यायसंगत, समावेशी और मनोरंजक स्कूली वातावरण में उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करना है।

यह देश भर में 14500 से अधिक स्कूलों के उन्नयन और विकास के लिये सितंबर 2022 में शुरू की गई एक केंद्र प्रायोजित योजना है।

पीएम-श्री पहल के तहत स्कूलों को अपग्रेड करने के लिये 630 करोड़ रुपए आवंटित किये गए हैं।

निपुण भारत: 'बेहतर समझ और संख्यात्मक ज्ञान के साथ पढ़ाई में प्रवीणता के लिये राष्ट्रीय पहल- निपुण' (National Initiative for Proficiency in Reading with Understanding and Numeracy- NIPUN) भारत मिशन का दृष्टिकोण मूलभूत साक्षरता तथा संख्यात्मकता के सार्वभौमिक अधिग्रहण को सुनिश्चित करने हेतु एक सक्षम वातावरण बनाना है ताकि प्रत्येक बच्चा वर्ष 2026-27 तक ग्रेड 3 के अंत तक पढ़ने, लिखने और संख्यात्मकता में वांछित सीखने की दक्षता हासिल कर सके।

पीएम ई-विद्या: इस पहल का उद्देश्य दीक्षा जैसे विभिन्न ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म प्रदान करके और देश भर के छात्रों को ई-पुस्तकें तथा ई-सामग्री प्रदान कर ऑनलाइन शिक्षा एवं डिजिटल शिक्षण को बढ़ावा देना है।

NCF FS और जादुई पिटारा: 3 से 8 वर्ष की आयु के बच्चों हेतु खेल-आधारित अध्ययन की शिक्षण सामग्री हेतु मूलभूत चरण के लिये राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (National Curriculum Framework for Foundational Stag- NCF FS) और जादुई पिटारा शुरू की गई है।

निष्ठा: 'नेशनल इनीसिएटिव फॉर स्कूल हेड्स एंड टीचर्स होलीस्टिक एडवांसमेंट' अर्थात् निष्ठा (National Initiative for School Heads and Teachers Holistic Advancement- NISHTHA) भारत में शिक्षकों और स्कूल प्रधानाचार्यों के लिये एक क्षमता-निर्माण कार्यक्रम है।

नेशनल डिजिटल एजुकेशन आर्किटेक्चर (NDEAR): यह वास्तुशिल्प संबंधी ब्लूप्रिंट है, जो शिक्षा से संबंधित डिजिटल प्रौद्योगिकी-आधारित अनुप्रयोगों को सक्षम बनाने हेतु मार्गदर्शक सिद्धांतों का एक सेट तैयार करता है।

शैक्षणिक रूपरेखा: क्रेडिट हस्तांतरण और शैक्षणिक लचीलेपन की सुविधा के लिये राष्ट्रीय क्रेडिट फ्रेमवर्क (NCrF) तथा राष्ट्रीय उच्च शिक्षा योग्यता फ्रेमवर्क (NHEQF) की शुरुआत।

शिक्षा क्षेत्र में निवेश में वृद्धि: इस नीति के अनुसार, केंद्र सरकार और राज्य सरकारों दोनों को शिक्षा क्षेत्र के लिये सकल घरेलू उत्पाद का संयुक्त रूप से 6% आवंटित करना होगा।

NEP2020 की चुनौतियां

भाषा का कार्यान्वयन यानि क्षेत्रीय भाषाओं में जारी रखने के लिए 5वीं कक्षा तक पढ़ाना एक बड़ी समस्या हो सकती है। बच्चे को क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाया जाएगा और इसलिए अंग्रेजी भाषा के प्रति कम दृष्टिकोण होगा, जो 5वीं कक्षा पूरा करने के बाद आवश्यक है।

बच्चों को संरचनात्मक तरीके से सीखने के अधीन किया गया है, जिससे उनके छोटे दिमाग पर बोझ बढ़ सकता हैं।

संस्थागत स्वायत्तता का अभाव हैं ।कई संस्थानों को स्वायत्तता की कमी का सामना करना पड़ता है, जिससे अनुकूलन और नवाचार करने की उनकी क्षमता में बाधा आती है।

पैनल ने वर्तमान उच्च शिक्षा प्रणाली के अंदर अनुसंधान पर कम ज़ोर दिया। जो की एक बहुत बड़ी चुनौती हैं।

यह कहा जा सकता है की नई शिक्षा नीति 2020 के अनुसार शिक्षा रटने वाले विषयों, समय सीमा को पूरा करने और अंक प्राप्त करने से कहीं अधिक है, लेकिन शिक्षा का वास्तविक अर्थ ज्ञान, कौशल, मूल्यों को प्राप्त करना और उस क्षेत्र में निरंतर कार्य करना और प्रगति करना है, जिसमें व्यक्ति अपनी रुचि खोज की करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अगर नई शिक्षा नीति 2020 को सही तरीके से लागू किया जाए तो यह भारतीय शिक्षा को नई ऊंचाइयों पर ले जा सकती है। हालाँकि इसके कुछ उद्देश्यों में लक्ष्यों की स्पष्टता का अभाव है, लेकिन हम वास्तव में इसका न्याय तब तक नहीं कर सकते जब तक कि इसकी लिखित योजनाएँ क्रिया में न आ जाएँ। हम केवल सर्वोत्तम परिणामों की आशा कर सकते हैं, आखिरकार, यह छात्रों के समग्र विकास और प्रगति को ध्यान में रखते हुए लाई गयी है।

निष्कर्ष

वर्तमान शिक्षा प्रणाली वर्ष 1986 की मौजूदा शिक्षा नीति में किए गए परिवर्तनों का परिणाम है। इसे शिक्षार्थी और देश के विकास को बढ़ावा देने के लिए लागू किया गया है। नई शिक्षा नीति बच्चों के समग्र विकास पर केंद्रित है। इस नीति के तहत वर्ष 2030 तक अपने उद्देश्य को प्राप्त करने का लक्ष्य है।इसमें अनेक संभावनाओं के साथ चुनौतियां भी है जिन्हे भी ध्यान में रखना आवश्यक है।

सन्दर्भ सूची

NEP 2020: Implementation Challenges. Available on:
https://www.educationworld.in/nep-2020-implementation-challenges/

India Education Diary.

Highlights of New Education Policy 2020. available on: https://indiaeducationdiary.in/highlights-ofnew-education-policy-2020/ India Education Diary.com

https://www.education.gov.in/sites/u pload files/mhrd/files/NEP_Final En glish 0.pdf

https://innovate.mygov.in/wpcontent/uploads/2019/06/mygov

https://en.wikipedia.org/wiki/Nation al Education Policy_2020

Gupta, Stuti (2020). Role and Perspective Contribution of Technology in Education Sector with respect to Natioanal Education Policy 2020. In Gupta. Payal (Ed)

National Education Policy (2020) A paradigm shift in indian Educaton Ishika Book Distributi on, p183.

Kumar, K. (2005). Quality of Education at the Beginning of the 21st Century: Lessons from India. Indian Educational Review Draft National Education Policy 2019.

Manoj, Ambika (2021): National Education Policy-2020: Issues and Challenges in implementation. University news Vol.59, no-5, April 12-18. p.146.

NEP 2020: Implementation challenges, Ministry of Education. Indiatoday.in/education-today/feature philia/story/a-reality-checkon-nep-2020-major-challenges-in-implementation-1711197-2020-08-14.

मानसिक पर्यावरण प्रदूषण व उसका निवारण : श्रीमद्भगवद्गीता की प्रासंगिकता

प्रो. पूर्णचन्द्र उपाध्याय
आचार्य एवं संस्कृत विभागाध्यक्ष
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बून्दी(राज.)

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्।।

भूमिका - किसी भी राष्ट्र के विकास में पर्यावरण की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं उपादेयपूर्ण है। क्योंकि संपूर्ण ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एवं प्रलय का मूल कारण पर्यावरण ही है। 'परितः आसमन्ताद् वृणोति आच्छादयति नाम परिरक्षति जगदिदमिति पर्यावरणम्।' अर्थात् जो संपूर्ण जगत् का संरक्षण एवं संवर्धन करता है वह पर्यावरण कहलाता है। यह सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक है। प्राकृतिक पर्यावरण जहां संसार के बाह्य तत्त्व का सुरक्षा कवच के रूप में कार्य करता है वहीं सांस्कृतिक पर्यावरण अन्तस्तत्त्व की सुरक्षा में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ये दोनों ही जीवजगत् के संरक्षण के साथ विकास में अनन्य साधक हैं। सांस्कृतिक पर्यावरण के प्रमुख तत्त्वों में से अन्यतम एवं महत्त्वपूर्ण है मानसिक स्वास्थ्य।

यह ध्रुव सत्य है कि कृत्रिमता के इस युग में विज्ञान की निरन्तर प्रोन्नति के कारण एक तरफ जहां समग्र विश्व भौतिकवाद के चरम पर पंहुच कर समस्त सुख सुविधाओं से सुसम्पन्न है, वहीं दूसरी ओर भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा की अस्मिता का परिचायक अध्यात्मवाद से दूरी बनाने के कारण नैसर्गिक सांस्कृतिक पर्यावरण के प्रदूषण से प्रदूषित हो कर अवसाद के जाल में जकडता हुआ जैविक सत्ता के वास्तविक लक्ष्य आनन्दमय स्वरूप से अनभिज्ञ बनता जा रहा है। जिसके दुष्परिणाम से कोई भी अछूता नहीं है। आज प्रत्येक व्यक्ति से लेकर परिवार, समाज एवं राष्ट्र तक संपूर्ण मानवीय जीवन मूल्यों का पतन लगातार विकराल बनता जा रहा है। इसका कारण है पाश्चात्य संस्कृति का भौतिकवाद। इस भौतिकवाद के चकाचौंध में मनुष्य ने अपनी नैतिकता से विमुख होकर आधि यानी मानसिक व्याधि

से सन्तप्त है। इस मानसिक पर्यावरण प्रदूषणरूपी सन्ताप से बचाव केलिए प्राच्य ज्ञान विज्ञान परम्परा के नवनीत स्वरूप एवं सनातन संस्कृति की अस्मिता का परिचायक श्रीमद्भगवद्गाता का कालजयी संदेश से बढ कर कोई अच्छा उपाय परिलक्षित नहीं होता है। क्योंकि अठारह अध्यायों की भगवद्गीता केवल एक शास्त्र या दर्शन ग्रन्थ नहीं है अपितु व्यावहारिक जीवन की समस्त उलझनों के समाधान सूत्र के साथ जीवन जीने का कलात्मक उपदेष्टा है।

मानसिक पर्यावरण प्रदूषण के कारण व निदान - जीवन रथ के यात्रापथ को सुगम बनाने में मनोवस्था की भूमिका सर्वथा महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि कर्म सम्पादन की प्रवृत्ति व निवृत्ति हेतु मन की सबलता ही पुण्य है और मन की दुर्बलता से बढ कर कोई बडा पाप नहीं है। इस मानसिक पर्यावरण को प्रदूषित करने के पीछे संसार में अनेक कारण सन्निहित हैं -

मोहजन्य सन्ताप - सांसारिक जीवन में मानव एक सामाजिक प्राणी होने के नाते उसका परिवार के प्रत्येक सदस्यों एवं समाज के रिश्ते सम्बन्धियों के प्रति माया(अज्ञानता) के कारण आसक्ति हो जाती है। न केवल मानव समाज अपितु मानवेतर स्थावर, जङ्गम व सजीव तथा निर्जीव पदार्थ के प्रति भी उसे मोह हो जाता है। जिसे वह शाश्वत समझ कर उसकी क्षणभङ्गुरता अर्थात् अभाव में मानसिक दुर्बलता के कारण विषादग्रस्त हो जाता है। इस अवस्था में वह किंकर्तव्यविमुख होकर कर्मविरहित हो जाता है या अपकर्म का अधिकारी बन जाता है। जिसके दृष्टान्त के रूप में हमें श्रीमद्भगवद्गीता के प्रथम अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति मध्यम पाण्डव अर्जुन की भावाभिव्यक्ति से स्पष्ट हो जाता है। अर्जुन युद्धभूमि में जब अपने सम्मुख स्वजनों तथा गुरुजनों को प्रत्यक्ष करता है तब युद्ध के परिणाम की भयाबहता को सोच कर उसका मानसिक सन्ताप बढ जाता है और वह विषादग्रस्त होकर कहता है -

दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्।।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते।।
गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः।। (गी.1.28-30)

उपर्युक्त पद्यों से स्पष्ट ज्ञान होता है कि मोह ही दुर्बलता का कारण है और उससे मानव का मानसिक पर्यावरण प्रदूषित हो जाता है।

तत्त्वज्ञान (निदान) - मोहजन्य इस मानसिक प्रदूषण के रोकथाम हेतु गीता के अनुसार तत्त्वज्ञान की नितान्त आवश्यकता है। क्योंकि तत्त्वज्ञान के अभाव में वास्तविकता का ज्ञान नहीं हो पाता है, जोकि अनर्थता का कारण है।

जैसाकि भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन के मोह दूर करने के उद्देश्य से कहते हैं -

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।। (गी.2.16)

इस प्रकार उपर्युक्त पद्य से हमें यह संदेश प्राप्त होता है कि सांसारिक असद् वस्तु एवं सद् वस्तु के तत्त्व का सम्यक् ज्ञान हो जाने पर अवश्यम्भाविता का अवबोधन के चलते व्यक्ति को मोहजन्य संताप से मुक्ति मिलेगी। योगेश्वर श्रीकृष्ण अर्जुन को माध्यम बनाकर संपूर्ण संसार को संदेश देते हुए बार-बार कहते हैं कि जो अवश्यम्भावी है और जिसके भूत एवं भविष्य के बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं हो तो मोहाच्छन्न होकर उस विषय में दुःखी होना सर्वथा निरर्थक है। इस प्रसङ्ग की अन्वर्थता में निम्नांकित पद्य सटीक है -

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना।। (गी.2.28)

फलासक्त कामनाजन्य सन्ताप - वर्तमान युग में प्रत्येक व्यक्ति किसी भी प्रकार के कर्म सम्पादन करने से पूर्व उसके फल की प्राप्ति के बारे में सोचने लग जाता है। उसके लाभ, क्षति और उसकी अधिक फलप्रसूता के सम्बन्ध में अत्यधिक तृष्णा या कामना के कारण मानसिक द्वन्द्व से ग्रस्त हो जाता है। जिसके परिणाम स्वरूप या तो वह अपकर्म यानी पाप कृत्य में प्रवृत्त होने लगता है या तो उस सत् कर्म से विमुख हो जाता है। ये दोनों ही परिस्थितियां मानसिक पर्यावरण के लिए सर्वथा अस्वास्थ्यकर है। आज समाज में महाव्याधि के रूप में व्याप्त समस्त विसंगतियों व्यभिचार, भ्रष्टाचार, दुराचार, लुण्ठन, प्रताडन, ईर्ष्या, असूया, कलह आदि के मूल में फलासक्त कामना ही जिम्मेदार है।

निरासक्त कर्म की उपासना व समत्व की भावना (निदान) - इस सन्ताप से मुक्ति का एक मात्र मार्ग है निरासक्त कर्म की उपासना, जो समत्व की भावना से ही सम्भव है। सुख, दुःख, हानि, लाभ, जय, पराजय, अपना, पराया इन सभी बन्धनों से परे जाकर समत्व की भावना से सिर्फ अपना धर्म अर्थात् अपना कर्तव्य एसा समझ कर कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए। क्योंकि प्रत्येक जीव को धरा पर जन्म लेते ही कर्म करने का अधिकार है, जोकि उसका धर्म ही है। परन्तु कर्म के फल में उसका कतई अधिकार नहीं है। भगवान् ने अर्जुन को माध्यम बनाकर मानव समाज केलिए यही संदेश देते हुए कहा है -

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।। (गी.2.47)

फल की कामना से रहित होकर कर्म सम्पादन के पीछे यह दर्शन निहित है कि, कर्म का विधान तो हमारे हाथ में है परन्तु उसकी फलप्राप्ति हमारे हाथ मे नहीं है, वह तो जगन्नियन्ता परम पिता के अधीन है। साथ ही हमें किसी के द्रव्य के प्रति भी लोभासक्त न होने का उपदेश दिया गया है। इतना ही नहीं, ईश्वर के प्रति समर्पित होकर स्वार्थ त्याग की भावना से ही यह समस्त वस्तु ईश्वर प्रदत्त ऐसा समझ कर सांसारिक वस्तुओं का उपभोग करने केलिए हमें परामर्श दिया गया है। ईशावास्योपनिषद् का निम्नांकित मन्त्र यहां अत्यन्त प्रासंगिक है -

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथाः मा गृधः कस्यचिद्धनम्।। (ईशा.1)

इस अवसर पर ईशावास्योपनिषद् का अन्य एक मन्त्र का निहितार्थ भी विमर्शनीय है। जैसाकि -

एवं त्वं कर्म कुर्वन् जीजिवेषेत् शतं समाः। (ईशा.2)

मन्त्र का अर्थ यह है कि निरासक्त कर्म अर्थात् फल की कामना से रहित कर्म करते हुए समुत्पन्न सकारात्मक मानसिक सबलता के कारण दीर्घायु बनने की इच्छा करनी चाहिए। इसका आशय यह है कि फल की कामना से कर्म करने बाले को जीने का भी अधिकार नहीं है।

इस प्रकार समत्वबुद्धि से युक्त तत्त्वज्ञ पुरुष कर्मफल से विरक्त होकर सर्वविध बन्धन से मुक्त हो जाता है। परिणामतः उसे निर्विकार परमपद प्राप्त हो जाता है।

इन्द्रियजन्य सन्ताप - मानसिक अस्वस्थता का अन्य एक कारण है इन्द्रियजन्य सन्ताप। जीव मात्र को पीडा देने वाली नेत्र आदि पंच ज्ञानेन्द्रियां वाक् आदि पंच कर्मेन्द्रियों के साथ मिलकर प्रयत्नशील विद्वान् पुरुष के मन को भी विचलित कर देती हैं तो साधारण मनुष्य की दशा के बारे में क्या कहें। परिणाम स्वरूप मानव सन्मार्ग से हटकर असन्मार्ग पर चल पडता है और अनन्त मनस्ताप से व्यथित होने लगता है। कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि पर श्रीकृष्णने अर्जुन को इस दर्शन से परिचय कराते हुए कहा है -

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः।। (गी.2.60)

इन्द्रियों की सहायता से मन जब विषयों में प्रवृत्त होने लगता है तब उनमें मनुष्य की आसक्ति हो जाती है, आसक्ति यानी संगति से मन में कामना की उत्पत्ति होती है, कामना के कारण क्रोध उत्पन्न होता है, क्रोध से पुनः किंकर्तव्यविमूढता की उत्पत्ति होती है, मूढता के कारण स्मृति शक्ति क्षीण हो जाती है, स्मृति क्षीण होने पर विवेक का

नाश हो जाता है और बुद्धि के नाश हो जाने से मनुष्य अपनी मर्यादा यानी स्थिति से गिर जाता है। इस प्रकार इन्द्रियजन्य सन्ताप मानव समाज का विनाश का कारण बनता है। यहां और एक पद्य भी अत्यन्त प्रासंगिक एवं महत्त्वपूर्ण है -

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि।।(गी.2.67)

इन्द्रियों का नियन्त्रण एवं स्थितप्रज्ञता (निदान) - इस इन्द्रियजन्य सन्ताप से मुक्ति हेतु इन्द्रियनिग्रह करते हुए स्थितप्रज्ञता के प्रति यत्नवान् होना ही मानवमात्र केलिए श्रेयस्कर है। सांसारिक गतिविधियों को मूर्तरूप देने केलिए 'पùपत्रमिवाम्भसा' की तरह जीवन यात्रा का निर्बहन करना होगा। इसके लिए कछवे का आचरण ही सर्वोत्तम शिक्षणीय साधन है। आवश्यकता के अनुसार आत्मरक्षार्थ कछवा अपने अङ्ग प्रत्यङ्गों को जिस प्रकार सभी ओर से अपने अन्दर खिंच लेता है उसी प्रकार इन्ि्रद्रयों को अपने विषयों से हटा लेने पर बुद्धि यानी प्रज्ञा स्थिर हो जाती है। इसी को स्थितप्रज्ञता कहते हैं। यहां भगवद्गाता का निम्नांकित पद्य नितान्त प्रासंगिक है -

यदा संहरते चायं कुर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।। (गी.2.58)

निष्कर्ष - उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर उपनीत होते हैं कि इन्द्रियों की प्रवृत्ति को संयमित कर मन को पवित्र बनाने पर ही मनुष्य की बुद्ध स्थिर होती है और बुद्धि की स्थिरता होने पर ही भावना या संवेदना का उद्रेक होता है। मानवीय संवेदना से ही शान्ति मिलती है और शान्ति से सभी प्रकार का सुख प्राप्त होता है। जैसा कि गीता में कहा गया है -

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावायतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम्।। (गी.2.66)

अतः साम्प्रतिक भौतिकवाद के युग में प्रत्येक मनुष्य के मन को पवित्र बनाते हुए मानव समाज के कल्याण केलिए श्रीमद्भगवद् गीता का परिशीलन नितान्त प्रासंगिक है। इसलिए उपनिषदों में सही कहा गया है -

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः (मैत्रायणी उपनिषद् 6.34)

अध्यापक शिक्षा में एक नये युग की शुरुआत

श्रीमती कविता भारद्वाज
असिस्टेंट प्रोफेसर
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, शाहपुरा बाग, जयपुर

प्रस्तावना

शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण और जटिल गतिविधि है, विद्यार्थियों को शिक्षित करने का दायित्व अध्यापकों का है, इसलिए अध्यापक शिक्षण सम्भवतः और भी निर्णायक एवं जटिल प्रक्रिया है सर्वविदित है कि प्राचीन काल में अध्यापकों के प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं थी, वर्तमान समय में हम देखे तो परिस्थिति इसके विपरित है, शिक्षा महाविद्यालय की गिनती निरंतर बढ़ रही है। नुमानतः 2009-2010 में तो पूरे विश्व में शिक्षा महाविद्यालयों की संख्या तेजी से बढ़ी है। ऐसा लगने लगा है कि अध्यापक शिक्षा में नये युग की शुरुआत हो रही है।

अध्यापक शिक्षा के सबसे बड़ी चुनौती यह है कि शिक्षकों को किस प्रकार शिक्षित और प्रशिक्षित किया जाए ताकि वे किसी भी परिस्थिति मेंशिक्षण में गुणवत्ता और उत्कृष्टता का त्याग किए बिना व्यक्तिगत विशिष्टता और सामाजीकरण के बीच एकता कायम कर सकें। आज शिक्षक प्रशिक्षण में आवष्यकता है स्वतंत्रता और रचनाशीलता की गुणवत्तापूर्ण शिक्षण में कुछ अनुप्राणित करने वाले संकेतक है। जिनमें चिन्तन भावना, भागीदारी, ग्रहणशीलता और प्रेम शामिल है।

आत्मविश्लेषण, अज्ञात, अनुपलब्ध, प्रसन्नता प्रकटित की खोज की खोज में उद्यमशीलता की आवश्यकताओं को देखते हुए एक अध्यापक शिक्षा में एक मूलभूत और मुख्य बदलाव नजर आ रहा है कि सीखने-सीखाने की प्रक्रिया में अब शिक्षार्थी को मुख्य रूप में नहीं रखा जा सकता तथा ऐसे नीरस जानकारी और स्तरहीन ब्योरे तक सीमित नहीं रखा जा सकता है। मेरी ओर से आत्ममंथन एवं चिन्तन वास्तव का प्रयास मात्र है। वास्तव में जैसे शिक्षक होंगे वैसे ही संस्थान होंगे। किसी संस्थान में समुचित और वांछनीय बुनियादी सुविधाएँ जैसे भवन कक्षाओं के लिए कमरें, प्रयोगशालाएँ, पुस्तकालय, खेल के मैदान, छात्रावास और अन्य सुविधाएँ हो सकती है। परन्तु उसमें सक्षम, योग्य, परिश्रमी, समर्पित और ईमानदार शिक्षक अगर न्यूनतम संख्या में भी न हो तो शिक्षा और शिक्षण का प्रयोजन असफल हो जाता है। क्योंकि किसी शिक्षा संस्थान में मनोवैज्ञानिक दृष्टि से शिक्षार्थियों के बीच अनेक व्यक्तिगत भिन्नताएँ और समानताएँ होती है।

अतः एक आदर्श शिक्षक जानता है कि वह कक्षा के विषय में किस प्रकार का व्यवहार करेगा। निःसन्देह उससे उम्मीद की जाती है कि वह शिक्षार्थी को यथा सम्भव समाज के प्रति समर्पित बनाने के लिए शिक्षण और प्रशिक्षण को न्यायोचित सहमति के साथ विशिष्टतया प्रदान करने के स्वर्णिम सिद्धांत का पालन करें।

आज शिक्षा जगत एक निर्णायक मोड़ पर पहुँच गयी है, जहाँ कम्प्यटू र के उदय के साथ स्मरण शक्ति पर शिक्षा की अत्यधिक निर्भरता समाप्त हो गई है।

ऐसे में सीखने सीखाने की निष्क्रीयता दूर करनी होगी और उसके स्थान पर अध्यापक शिक्षा में व्यापक परिवर्तन करने है, जिनमें बोध और संवेदनशीलता, सौन्दर्य बोध और अन्तरतम में उठने वाले गहन सवालोंका ध्यान देना होगा।

शिक्षा कोई भौतिक वस्तु नहीं है जिसे डाक या शिक्षक द्वारा विपरीत किया जा सके। उर्वर और बच्चें की भौतिक और सांस्कृतिक जमीन में होती है। इस कार्य मेंशिक्षकों की भूमिका और गरिमा को अवश्य सुदृढ़ एवं रेखांकित किया जाना चाहिए। क्योंकि विद्यार्थी बड़ो से अधिक समझते और निरीक्षण करते है, इस लिए ज्ञान के के रूप में उनकी सशक्त भूमिका को समझने की आवश्यकता है। 21वीं सदी में अध्यापक शिक्षा को कई दिशाओं में नया रूप दिया जा सकता हैः-

1. शिक्षण में गुणवत्ता के संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान।
2. विद्यालयी शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम को नया रूप देना।
3. पाठ्यपुस्तकों और सीखने सीखाने सम्बन्धी सामग्री में संशोधन और परिष्कार।
4. शिष्य के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा को विशिष्ठता प्रदान करें।
5. शिक्षार्थी की देखभाल और उनमें रचनात्मक और आलोचनात्मक ढंग से सोचने का कौशल पैदा करना।

सेवा पूर्व अध्यापक शिक्षा का सामान्य रूप से शिक्षा के क्षेत्र में और विशेष रूप से अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है

सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षणार्थी, अपनी रुचि और ईमानदारी के बावजूद सर्वांगीण विकास में बेहतर भागीदारी नहीं निभा पाते और वे शिक्षण के चुनौतीपूर्ण कार्य के प्रति न्याय नहीं कर पातें।

1. सेवा पूर्व शिक्षक विद्यार्थी, अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम और उनकी विभिन्न गतिविधियों को अरुचि पूर्ण ढंग से लेते है क्योंकि उनमें से ज्यादातर एक से अधिक परीक्षओं की तैयारी में लगे रहते है।
2. शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की सेवा पूर्व शिक्षा के प्रति शैक्षिक और प्रशासनिक स्तर पर संकीर्ण दृष्टिकोण अपनाने से अध्यापक शिक्षा की प्रगति में रुकावट आती है।
3. शिक्षक प्रशिक्षकों द्वारा विशिष्ट गतिशील और प्रेरक अनुदेशों के अभाव के कारण छात्रध्यापकों का शिक्षण और प्रशिक्षण के जगत में कुछ नया कर दिखाने का सपना चूर हो जाता है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त प्रयोजन के लिए निम्न मुद्दों पर विचार किया जा सकता है-

1. विषय वस्तु के ज्ञान का अभाव दूर करना समुचित अभ्यास कराना।
2. नवीन शिक्षण पद्धतियों में नियमित और व्यवस्थित प्रशिक्षण।
3. कमजोर संस्थानों में गुणवत्ता और उत्कृष्टता सुनिश्चित करने के लिए शिक्षकों के द्वारा ज्ञान का आदान प्रदान कार्यक्रम।
4. सही विचारों सही धारणाओं, सही चिन्तन और सही नीतियों की ओर शिक्षकों का ध्यान आकर्षित करना।
5. स्वअध्ययन और स्वअनुभव के सन्दर्भ में कौशल हासिल करने के सिद्धांत को रेखांकित करते हुए

शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार लाने की भावना को बढ़ावा देना।

शिक्षण की व्यावसायिक दृष्टि से ज्ञानवान बनाने के अत्यन्त भरोसेमन्द और सुदृढ़ कार्यक्रम के लिए सर्वप्रथम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्ष्य यह है कि शिक्षक को किस प्रकार विद्यार्थियों की प्रगति में प्रेरक की भूमिका अदा करने का प्रशिक्षण दिया जाए। अतः कहा जा सकता है कि प्रतिबद्ध और प्रवीण शिक्षक तैयार करने के लिए सशक्त और स्थिर अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम शुरू किया जाना चाहिए ताकि विभिन्न आयामों में सुदृढ़ प्रगति और सक्षमता सुनिष्चित की जा सकें।

समस्त सजग व्यक्तियों के लिए अध्यापक शिक्षा का काम विकासात्मक, विविधतापूर्ण सजीव लक्ष्यों का विस्तार करने वाला है।

अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षण और अनुसंधान से सम्बद्ध विभिन्न पक्षों चाहे निजी संस्थान, मुक्त विश्वविद्यालय या विश्व विद्यालयों के शिक्षा विभागों, शिक्षा में आधुनिक अध्ययन केन्द्रों और विष्वविद्यालयों के तहत कॉलेजों के बीच समन्वय का स्वस्थ वातावरण बनाने की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. शर्मा (डॉ.) आर.ए.चतुर्वेदी (डॉ.) शिक्षा, अध्यापक शिक्षा इण्टरनेशनल पब्लिसिंग हाऊस मेरठ (648-649)
2. अग्रवाल जे.सी. 21वीं शताब्दी के सन्दर्भ में अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
3. भट्टाचार्य (डॉ.) जी.सी. अध्यापक शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
4. सक्सेना एन.आर.मिश्रा, आर लाल बुक डिपो, मेरठ।
5. मंगल (डॉ.) के.पी आधुनिक भारतीय शिक्षा अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
6. पाठक पी.डी. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।

महान शिक्षाविद डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम एवं डॉ. राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन

मलखान मीणा
अस्सिटेंट प्रोफेसर
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, जयपुर

सारांश

वर्तमान समय में जब देश आजाद हो गया है, तब भी अनुशासनात्मक, अध्यापक का स्थान, उद्देश्य, शिक्षण विधि, भाषा विकास, विद्यार्थी, तकनीकी शिक्षा आदि के संबंध में डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम एवं डॉक्टर राधा कृष्ण के विचार वर्तमान परिस्थितियों में सही उतरते हैं। शिक्षकों के गिरते हुए आचार्य - विचार और मानसिक स्तर छात्रों की अनुशासनहीनता और विचारों के प्रति ऐसे शिक्षा शास्त्रियों की शैक्षिक विचारों पर ध्यान अवश्य जाना चाहिए, अन्यथा सबल से सबल शिक्षा दर्शन और अच्छी से अच्छी शिक्षा प्रणाली भी अन्य उपयोगी होगी। डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम एवं डॉ राधाकृष्णन द्वारा प्रतिपादित पाठ्यक्रम सामान्य पाठ्यक्रम है। वे विज्ञान व आध्यात्म में समन्वय चाहते थे। वे तकनीकी विषयों के साथ-साथ साहित्य और कला की शिक्षा भी देना चाहते थे। दोनों ही मनीषी व्यवहारिक, जीवनोपयोगी और राष्ट्रोपयोगी पाठ्यक्रम पर बल देते थे। व्यावसायिक पाठ्यक्रम के महत्व को दोनों ही शिक्षाविद स्वीकार करते थे।

मूल शब्द - महान शिक्षाविद, शैक्षिक विचारों, अनुशासन, शिक्षणविधि

प्रस्तावना

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के अनुसार शिक्षा से मानव का व्यक्तित्व संपूर्ण विनम्र और संसार के लिए उपयोगी बनता है।सही शिक्षा से मानवीय गरिमा, स्वाभिमान और विश्व बंधुता में बढ़ोतरी होती है। यह गुण शिक्षा के

आधार होते हैं।अंततः शिक्षा का उद्देश्य सत्य की खोज। इस खोज का केंद्र अध्यापक होता है जो अपने विद्यार्थियों को शिक्षा के माध्यम से जीवन में और व्यवहार में सच्चाई की शिक्षा देता है। छात्रों को जो भी कठिनाई होती है, जो भी जिज्ञासा होती है, जो वह जानना चाहते हैं, उन सब पर वे अध्यापक पर ही निर्भर करते हैं। उनके लिए उनका अध्यापक एक तरह से एन्साइक्लोपीडिया है जिसके पास सभी प्रश्नों के उत्तर हैं। यदि शिक्षक के मार्गदर्शन में प्रत्येक व्यक्ति शिक्षा को उसके वास्तविक अर्थ में ग्रहण कर मानवीय गतिविधि के प्रत्येक क्षेत्र में इसका प्रसार करता है तो मौजूदा 25वीं सदी में दुनिया काफी सुंदर हो जाएगी। डॉ. कलाम कहते हैं - शिक्षा के संबंध में मेरा विचार यह है उसके द्वारा बच्चों की रचनात्मक शक्ति विकसित की जानी चाहिए। शिक्षा का अर्थ है- एक जागृत समाज की रचना। जागृत समाज के मुख्य तीन अंग है:

1. ऐसी शिक्षा प्रणाली जिसके निर्धारित मूल्य हो।
2. धर्म का आध्यात्मिक शक्ति में परिवर्तन।
3. आर्थिक विकास।

स्कूल जाने का परिणाम यह होना चाहिए कि युवा ज्ञान आधारित समाज के अंग बने और स्वयं अपने विकास के साथ-साथ राष्ट्रीय विकास में भी अपना योगदान करें। राधाकृष्णन ने शिक्षा को अत्यंत व्यापक रूप में लिया था। उन्होंने शिक्षा को जीवन के लिए आवश्यक माना है लेकिन जीवन के आध्यात्मिक विकास पर अधिक बल दिया है। उनका कहना था कि जब हम किसी क्षेत्र में संघर्ष करते हैं तो सर्वप्रथम हमें शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। शिक्षा ही मनुष्य को भौतिक वातावरण की शक्तियों से संघर्ष करने के लिए समर्थ बनती है जिससे वह निर्धनता को समृद्धि में बदल सके। शिक्षा ही व्यक्ति को आंतरिक संघर्ष पर विजय प्राप्त करने के योग बनाती हैं। जिससे वह अपनी हैं प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त कर सके। वह शिक्षा को ज्ञान तथा कौशल के विकास के लिए ही आवश्यक नहीं मानते वरन् जीवन यापन की कला में दीक्षित करने के लिए भी अनिवार्य मानते हैं। उनके अनुसार हम शिक्षक से सीखते हैं स्वयं से सीखते हैं तथा जीवन और उनके अनुभवों से भी सीखते हैं।

शिक्षा के उद्देश्य

डॉ. अब्दुल कलाम के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य रोजगार का सृजन होना चाहिए, ना की बेरोजगारी की संख्या बढ़ाना। प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए कि बच्चों की रचनात्मक शक्ति की बढ़ोतरी। सेकेंडरी शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए बच्चों में ऐसा आत्मविश्वास उत्पन्न करना कि वह अपना स्वयं का कोई छोटा उद्योग खड़ा कर सके या उच्च शिक्षा और शोध के क्षेत्र में प्रवेश कर सकें। या उच्च शिक्षा के संस्थान विश्व स्तरीय होने चाहिए जो उद्योग

जगत के साथ मिलकर कार्य करें। इसके साथ-साथ डॉ अब्दुल कलाम ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में शिक्षा के उद्देश्य एवं महत्व को समझाया है। हालांकि अक्षर ज्ञान होना किसी नागरिक के लिए अनिवार्य है, फिर भी सिर्फ इसी की बदौलत लाभकारी रोजगार मिलना संभव नहीं। जिन लोगों ने केवल हाई स्कूल तक पढ़ाई की है उनमें सही और आर्थिक रूप से उपयोगी हुनर का होना जरूरी है। देश में ऐसे नौजवानों की काफी बड़ी तादाद है। उन्होंने रोजगार पाने या अपना कारोबार शुरू करने के लिए प्रशिक्षित किए जाने की आवश्यकता है। उन्हें विनिर्माण, मरम्मत होटल, स्वास्थ्य सेवा, फूटकर कारोबार या फिर इलेक्ट्रीशियन, बढ़ई के कार्य में प्रशिक्षित किया जा सकता है। आधुनिक प्रतियोगी अर्थव्यवस्था में स्तरीय हुनर की आवश्यकता है और हमारा दायित्व है कि हम अपने नागरिकों को ऐसे हुनर में होशियार बनाएं।

डॉ. राधाकृष्णन ने शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण में भौतिक दृष्टिकोण के स्थान पर आध्यात्मिक उन्नयन को प्रमुख स्थान दिया है। उनके अनुसार शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है- ज्ञान का अर्जन, ज्ञान का रूपांतरण, अंतर्दृष्टि का विकास, आध्यात्मिक उन्नयन, चारित्रिक उन्माय, वैज्ञानिक मस्तिष्क का निर्माण, सच्ची धार्मिकता की भावना, लोकतंत्र का संरक्षण, राष्ट्रवाद की भावना, विश्वबन्धुत्व की भावना। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करना है। ज्ञान के बिना तो आध्यात्मिक विकास हो सकता है और न ही विवेक प्राप्ति हो सकता है। इसी ज्ञान के लिए विज्ञान, कला, साहित्य और दर्शन आदि का अध्ययन किया जाता है। इसी संदर्भ में विशेष बात जो राधाकृष्णन ने कही है वह यह है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान देना नहीं है वरन् और अधिक ज्ञान प्राप्त करने की प्यास बालकों के अंदर उत्पन्न करती है वे कहते हैं कि हमें उनके अंदर ज्ञान के संवर्धन के लिए उत्साह पैदा करना चाहिए। वह यह भी कहते हैं कि ज्ञान के रूपांतरण के पश्चात ही ज्ञान प्राप्ति का उद्देश्य सफल होता है।

राधाकृष्णन के अनुसार जीवन में वास्तविक सुख और शांति आध्यात्मिक विकास से ही संभव है। अतः शिक्षा का उद्देश्य आध्यात्मिक विकास होना चाहिये। उनके शब्दों में शिक्षा का उद्देश्य है हमारे व्यक्तित्व और अस्तित्व को सार्थक बनाना और ऐसी शक्ति प्रदान करना जिसमें, हम आध्यात्मिक जड़ता को समाप्त कर सकें और आध्यात्मिक संवेदना को शुद्ध कर सकें। चारित्रिक उन्नयन को राधाकृष्णन शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य मानते हैं। उनके अनुसार चरित्र के बिना किसी भी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती। उन्हीं के शब्दों में चरित्र ही प्रारब्ध है। चरित्र के द्वारा राष्ट्र के भाग्य का निर्माण होता है। जिस देश के देशवासियों का चरित्र नीचा होता है,वह देश कभी भी महान नहीं हो सकता है। यदि हम एक महान राष्ट्र का निर्माण करना चाहते हैं तो हमें अधिक संख्या में युवक युक्तियां को इस प्रकार शिक्षित करना होगा कि उनमें चरित्र का बल हो।

शिक्षण विधियाँ

डॉ अब्दुल कलाम ने निम्नलिखित शिक्षण विधियों को शिक्षण में महत्वपूर्ण बताया है-

प्रश्नोत्तर विधि- डॉ एपीजे अब्दुल कलाम सलाह देते हैं थे की कक्षा में एक शिक्षक को कम से कम 20 मिनट प्रश्न पूछने पर खर्च करना चाहिए। प्रश्नों के माध्यम से बच्चों में स्पष्ट सोच उत्पन्न होती है। डॉ कलाम कहते थे कि शिक्षकों द्वारा ऐसे प्रश्न पूछे जाने चाहिए जो चुनौती पूर्ण हो और छात्र सोचने एवं उत्तर देने के लिए अनुकुरण कर सके।

वाद विवाद विधि - यह विधि शिक्षक एवं छात्रों के बीच अंत: क्रिया पर जोर देती है। इस विधि की सफलता के लिए आवश्यक है कि छात्रों को अपने विचारों को खुलकर रखने की स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए। कलाम प्रत्येक सरल और जटिल समस्या को शिक्षक एवं छात्रों को आपसी समन्वय एवं सहयोग द्वारा हल करने पर बल देते हैं। डॉ कलाम छात्रों को खुले दिमाग से वाद विवाद एवं स्वतंत्रता से अपने विचारों को प्रस्तुत करने पर भी बल देते हैं।

ट्यूटोरियल विधि - डॉक्टर कलाम अपनी शिक्षा दर्शन में शिक्षक एवं अधिगम के लिए ट्यूटोरियल (शिक्षण संबंधी) विधि का उत्साह पूर्ण समर्थन करते हैं तथा इसके पक्ष में वे कहते हैं कि ट्यूटोरियल एवं विशेष परीक्षण छात्रों में विभिन्न प्रकार की क्षमताएं विकसित करने के लिए आवश्यक है।

प्रयोग विधि - डॉ कलाम कहते थे कि विज्ञान एक आकर्षक विषय है और एक वैज्ञानिक के लिए यह जीवन पर्यन्त मिशन है। विज्ञान में स्वामित्व प्राप्त के लिए गणित की समझ आवश्यक है। गणित के साथ विज्ञान का समन्वय चमकदार होता है।अतः डॉ कलाम प्रयोग विधि का समर्थन शिक्षण में महत्वपूर्ण मानते हैं और कहते हैं कि प्रयोग एवं सिद्धांतों के सम्मिश्रण की आवश्यकता है।

राधाकृष्णन ने शिक्षण प्रक्रिया को भी तीन प्रकार का बताया है - 1. ज्ञानात्मक - इसके अंतर्गत श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन को स्थान प्रदान किया जाता है। 2. भावात्मक - इसमें अनुभूति पर बल दिया जाता है और जो शिक्षार्थी प्रकृति से भावना प्रधान होते हैं। उनके लिए तर्क आदि पर आधारित विधि अधिक प्रभावित नहीं होती। इन शिक्षार्थियों में प्रेम, दया, कोमलता आदि के गुण प्रमुखता लिए हुये होते हैं। 3. कार्यात्मक - क्रिया प्रधान विषयों के शिक्षा के लिए इस विधि को उपयुक्त बताया है। कार्य के द्वारा ज्ञान को शीघ्रता से अधिगम किया जा सकता है। " करके सीखना ' की विधि इस प्रकार की विद्यार्थियों के लिए लाभकारी होती है। व्यक्तिगत कर्म के कारण है और मनुष्य का शारीरिक संगठन एक कार्य करने वाला यंत्र समुच्चय है।

शिक्षक

डॉ कलाम कहते थे कि " मैं मानता हूं कि दुनिया में समाज के लिए शिक्षक से अधिक महत्वपूर्ण दायित्व किसी अन्य का नहीं है।" शिक्षक देश की रीड होते हैं। वह ऐसे स्तंभ होते हैं जिनके बल पर सभी प्रकार की आकांक्षाएँ साकार होती हैं। एक शिक्षक में अपने पेशे की प्रति प्रतिबद्धता होनी चाहिए। उसे शिक्षण एवं बच्चों से प्रेम होना चाहिए। उसे ने सिर्फ विषय की सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक बाते पढ़ानी चाहिए, बल्कि छात्रों में हमारी महान्य सभ्यता की विरासत एवं सामाजिक मूल्यों की जमीन भी तैयार करनी चाहिए। आधुनिक प्रौद्योगिकी की सहायता से शिक्षक छात्रों का ऐसा विकास करें कि वे बिना किसी शिक्षक की सहायता लिए स्वयं सीखने में सक्षम हो सकें। राधाकृष्णन ने भी शिक्षक को अत्यधिक उच्च और गरिमापूर्ण स्थान दिया और समाज में उसकी भूमिका को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना। उन्होंने कहा कि ' विशाल भवन और साधन किसी महान शिक्षक को स्थानापनन नहीं कर सकते। उनका कथन है कि हम किस प्रकार की शिक्षा अपने युवकों को दे सकते हैं। यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम किस प्रकार की शिक्षक प्राप्त कर सकते हैं। वे मानते हैं कि शिक्षक की बौद्धिक परम्पराओं और प्राविधिक कौशलों को एक सन्तति से दूसरी सन्तति को हस्तांतरित करता है, वही सभ्यता के दीप को प्रज्जवलित रखता है। जिस राष्ट्र ने शिक्षक के महत्व को नहीं समझा उनके लिए भविष्य की कोई आशा नहीं है।

शिक्षार्थी

डॉ कलाम कहते थे - एक छात्र के लिए सबसे महत्वपूर्ण गुण है उसकी अपनी ईमानदारी और दूसरों के प्रति संवेदनशील का भाव यह गुण आपको निस्संदेह एक आदर्श नागरिक बनने में मदद करेंगे।

छात्रों के लिए छः सूत्री शपथ

1. मैं अपनी पढ़ाई लगन पूरक करूंगा और उसमें उत्कृष्ट प्रदर्शन करूंगा।
2. मैं कम से कम पांच पौधे लगाऊंगा और उनके विकास के लिए देखरेख करता रहूंगा।
3. मैं अपने दुखी भाई बहनों के दुख को दूर करने के लिए लगातार प्रयास करता रहूंगा।
4. मैं एक तेजस्वी नागरिक बनने की दिशा में कार्य करूंगा और परिवार को सच्ची राह पर ले चलूंगा।
5. मैं मानसिक और शारीरिक विकलांग व्यक्तियों का दोस्त बना रहूंगा और उन्हें आम लोगों जैसे सहज महसूस करने के लिए प्रयास करता रहूंगा।

6. मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं अपने देश को एक विकसित राष्ट्र बनाने के लिए ईमानदारी से परिश्रम करूंगा।

राधाकृष्णन शिक्षार्थियों से अनेक आशाएं और अपेक्षाएं रखते हैं जिनमें मुख्य निम्न प्रकार है - 1. शिक्षार्थी को ज्ञान पिपासु होना चाहिए और शिक्षा प्राप्त करने के लिए पूर्ण समर्पित होना चाहिए। 2. शिक्षार्थी को जितेन्द्रीय होना चाहिए। 3. शिक्षार्थी को विवेकशील होना चाहिए। 4. शिक्षार्थी को आत्म संयमी और निष्कामी विवेकशील होना चाहिए। 5. शिक्षार्थी को अनुशासन प्रिय होना चाहिए। 6. शिक्षार्थी को सहनशील और धैर्यवान होना चाहिए। 7. शिक्षार्थी को लग्नशील और उत्साही होना चाहिए। 8. शिक्षार्थी में अपने शिक्षक के प्रति अपार श्रद्धा और पूर्ण विश्वास होना चाहिए। शिक्षार्थी को प्रेम, दया, और ईमानदारी, आज्ञापालन, विनम्रता, क्षमा, पवित्रता, सच्चरित्रता, कर्तव्यनिष्ठा और त्याग आदि गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए।

अनुशासन

डॉ कलाम छात्रों में आत्म अनुशासन की भावना विकसित करना चाहते हैं। अनुशासन के सम्बन्ध में उनके विचार इस प्रकार से है:- ० आत्म अनुशासन हमें संसारिक इच्छाओं द्वारा दूषित होने एवं भीषण आक्रमण से बचाव हेतु एक दुर्ग के रूप में कार्य करता है अन्ततः आत्म अनुशासित होने से बाध्य वातावरण का दुष्प्रभाव असफल रहता है।०प्रेम, विश्वास और उत्तरदायित्व का विरोध होने पर भी आत्म अनुशासन परिवार में खुशियां लाने में महत्वपूर्ण होता है० अनुशासन का अर्थ होता है कि हम सभी को दिन प्रतिदिन जीने के साथ-साथ ईमानदारी, वफादारी, और धैर्यपूर्णता के मूल्यों का अनुकरण करना चाहिए। हमें सकारात्मक सोच एकत्र करनी चाहिए कि हम देश के प्रति क्या कर रहे हैं और इसके साथ-साथ ही हमें अपने स्वयं के लिए भी लाभ प्राप्त होंगे। ० कठिन परिश्रम और अनुशासन के बिना जीवन की वास्तविकता कुछ नहीं है। ० अनुशासन की संवेदना उत्पन्न करना ही शिक्षा का उद्देश्य है। ० डॉक्टर कलाम सुझाव देते हैं कि माध्यमिक स्तर पर युवाओं को कम से कम 18 माह की एनसीएसी का प्रशिक्षण राजनीति, व्यवसाय, ब्यूरोक्रेसी, वैज्ञानिक, अनुसरण, खेलकूद आदि क्षेत्रों में अनुशासित रहेगा।

डॉ राधाकृष्णन ने अनुशासन शिक्षा व्यवस्था का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। इसके अंतर्गत व्यवहार, आंतरिक, प्रेरणा, आत्म नियंत्रण, आत्म संयम, विनय, कर्तव्य परायणता आदि सभी कुछ आ जाते हैं। अनुशासन का उद्देश्य शिक्षार्थियों को ज्ञान शक्तियों, क्षमताओं, योग्यता, आदतों, रुचियों, मूल्य और आदर्शों को प्राप्त करने में सहायता देना है जिससे शिक्षार्थी ही आदर्श नागरिक बनकर देश और समाज के विकास और उत्थान में सहायता दे सकते हैं।

निष्कर्ष

डॉ राधाकृष्णन डॉ एपीजे अब्दुल कलाम कि शैक्षिक उद्देश्य संबंधी विचार आज की परिस्थितियों में बहुत ही प्रासंगिक हैं। वे शिक्षा के द्वारा बालक का नैतिक और चारित्रिक विकास करना चाहते हैं। बालकों में स्वावलम्बन की भावना पैदा करना चाहते हैं। उन्हें आत्मनिर्भर बनाना चाहते हैं। उनका सांस्कृतिक विकास करना चाहते हैं । उनमें मानवीय मूल्य को विकसित करना चाहते हैं। उनमें सामाजिकता कि भावना पैदा करना चाहते हैं उनमे राष्ट्रीयता और अंतरराष्ट्रीयता के भाव उत्पन्न करना चाहते हैं। उनमें नेतृत्व के गुणों को विकसित करना चाहते हैं। इस प्रकार यह दोनों शैक्षिक उद्देश्यों के द्वारा श्रेष्ठ मानव का निर्माण करना चाहते थे। आज भारत में शिक्षा के क्षेत्र में विचारकों और शिक्षकों के सामने जब अनुशासनहीनता, चरित्रहीनता, नैतिक एवं आध्यात्मिक तत्वों का अभाव जैसी अनेक समस्याएं भयंकर रूप में उपस्थित हैं ।इन समस्याओं को दूर करने के लिए भारत में शिक्षा का पुनर्गठन करने की आवश्यकता है और शैक्षिक उद्देश्य उपनिषदकालीन शिक्षा से ग्रहण किए जा सकते हैं। तथा पाठ्यक्रम में नैतिक, आध्यात्मिक ज्ञान के साथ-साथ समाजोपयोगी विषय सम्मिलित करने होंगे तथा शिक्षा आत्मनिर्भरतापूर्ण बनाने के लिए शिक्षा व्यवसायोन्मुखी बनानी होगी।

सन्दर्भ सूची

1. आर्यनायकम: वर्तमान शिक्षा की गम्भीर स्थिति, हिन्दुस्तानी तालीम संघ, सेवाग्राम, वर्धा 1954
2. सिंह,राजेन्द्रपाल : राधाकृष्णन शिक्षाशास्त्री के रुप में, एशियन पत्लिशर्स, जालन्धर सिटी 1968
3. पाण्डेय,रआमशक्ल : विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री, विनोद पुस्तकमन्दिर आगरा 1996
4. गुप्त, रामबाबू: भारतीय शिक्षा शास्त्री, रत्न प्रकाशन मन्दिर आगरा 2004
5. भारत 2020: नई सहस्त्राब्दी के लिए एक दृष्टिकोण 1998
6. विंग्स ऑफ फायर: एन ऑटोबायोग्राफी 1999

वर्तमान में जीवनमूल्यों की प्रासंगिकता

डॉ. राम प्रकाश
सहआचार्य एवं विभागाध्यक्ष
(बी.ए.बी.एड.)
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ

शोधनिर्देशक
डॉ. यदु शर्मा
अधिष्ठाता, राज. विश्वविद्यालय
प्राचार्य, एस.एस. जैन सुबोध स्नाहकोत्तर महाविद्यालय

भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है। राष्ट्र के सभी व्यक्तियों का अपना अपना धर्म है। उसी धर्म से सम्बन्धित संस्कार उनमें व्याप्त हैं। इस सोच के आधार पर वे अपने जीवन मूल्यों जैसे - दया, सहिष्णुता, सहानुभूति, प्रेम, सद्भावना, सहभागिता, समन्वय, अहिंसा, उत्कृष्टता आदि का निर्वाह करते हुए अपने बच्चों में वैसे ही संस्कार विकसित करते हैं। उनके बच्चों के व्यवसाय एवं विषय चयन निर्धारित होते हैं। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, जैन आदि विभिन्न विचारधारा वाले विद्यार्थियों में कुछ ऐसी मनोवृत्तियाँ विकसित हो जाती है जो जीवन मूल्यों, को प्रभावित करती है। इस प्रकार विभिन्न धार्मिक विचारधारा वाले विद्यार्थी अपने धार्मिक आदर्शो के अनुरूप शिक्षा ग्रहण करते है।

विद्यार्थियों में एक क्रियात्मक चिन्तन शैली का विकास होने लगता है जो आगे चलकर विषय चयन में सहायक होता है। प्राचीनकाल में वैदिक ऋचाओं के बीच बालकों को शिक्षा दी जाती थी जिससे युग पुरूष और महान चरित्र विकसित हुए। स्वर्ण युग से लेकर वर्तमान युग तक शिक्षा में अनेक रूप परिवर्तित हुए हैं। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे भवन्तु निरामयाः' के लोक कल्याणकारी मंत्रों के मंगल पाठ से विभिन्न धार्मिक विचारधाराओं में जीवनमूल्यों जैसे सत्य, अहिंसा अपरिग्रह, प्रेम, करूणा, सहिष्णुता आदि का समायोजन हुआ है।

मैक्समूलर के अनुसार - "ज्ञान, आध्यात्म, योग, विज्ञान, चिकित्सा तथा ज्योतिष आदि क्षेत्रों में धार्मिक दृष्टिकोण महत्वपूर्ण रहता है। ज्ञान को आचरण में समायोजित करने का विचार धार्मिक चिन्तन के अनुरूप चलता है। विश्व के कौने-कौने से मेगस्थनीज, अलबरूनी, ह्वगसाँग आदि अनेक विद्यार्थी प्रतिवर्ष यहाँ आते थे और जीवन मूल्यों की श्रेष्ठता का वर्णन करते थे। इससे सामाजिक आर्थिक, धार्मिक और नैतिक मूल्यों का विश्लेषण मिलता है।"

प्राचीन भारतीय हिन्दू समाज चार वर्णो (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में विभक्त था। मुस्लिम समाज दो वर्ग शिया और सुन्नी, जैन धर्म श्वेताम्बर और दिगम्बर, सिक्ख समाज सिक्ख और मोना सिक्ख तथा ईसाई समाज पाश्चात्य

और भारतीयता की विचारधारा में विभक्त रहा है। आज की शिक्षा में समाज, संस्कृति, आदर्शों के संरक्षण, परिवर्धन तथा परिमार्जन का कार्य समन्वित विचारों एवं वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुरूप किया जाता है। वर्तमान में अध्ययनरत माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रवृत्ति एवं समझ के स्तर के अनुरूप पाठ्यक्रम एवं शिक्षण शैली में परिवर्तन शिक्षण को यथासम्भव रोचक तथा बोधगम्य बनाने के लिए किया जाता है। जीवन मूल्य सभी धर्मो एवं विचारधाराओं में समन्वय व समभाव उत्पन्न करते हुए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से प्रभावित है और वास्तविक पहलुओं से प्रमाणिक है। इससे धार्मिक भावना गौण होती प्रतीत होती है। धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक और नैतिक पिछड़नेपन से शिक्षार्थियों में परिवर्तन देखा जाता है।

वर्तमान में विभिन्न धार्मिक विचारधाराऐं (हिन्दू, मुस्लिम, जैन, सिक्ख तथा ईसाई) मुख्य दो वर्गों में बंट गई है पूँजीवादी और समाजवादी। धार्मिक आधार पर संचालित शिक्षण संस्थाओं में प्रत्येक धर्म के शिक्षार्थी बहुतायत में मिलते हैं।

जिनके जीवन मूल्यों का निर्धारण एवं समायोजन धार्मिक विचारों के अनुसार होता है। विकास की प्रक्रिया एवं शैक्षिक क्षमता का विकास तीव्र गति से होता है। उनमें भावनात्मक परिवर्तन होने लगते हैं। इस समय उनको सही मार्ग दर्शन और उचित वातावरण की आवश्यकता होती है। माता-पिता एवं निकट सम्बन्धी ही उनके दृष्टिकोण के अनुरूप विद्यार्थियों को प्रेरित करते हैं।

आज विज्ञान-प्रौद्योगिकी एवं प्रतिस्पर्धा के युग में परिवर्तन की प्रक्रिया व परिवर्तन की आवश्यकता एक सार्वभौमिक सत्य है। इस परिवर्तन चक्र में धार्मिक विचार परिवर्तित हुए हैं। इसका एक महत्वपूर्ण पक्ष शिक्षा है। शिक्षा के माध्यम से ही बालक की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास सम्भव है। शिक्षा विविध विचारशैली का एक समन्वित स्वरूप है। इसमें बालकों के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ सामाजिक, धार्मिक एवं मानवीय मूल्य अनिवार्य है। ईश्वर भक्ति, धार्मिकता, चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, समायोजन, नागरिक व सामाजिक कर्तव्यों का पालन, कुशलता की उन्नति, संस्कृति का संरक्षण तथा उद्देश्य प्राप्ति के लिए संघर्ष करना इसके आदर्श हैं जो निरन्तर शिक्षा सिद्धान्तों के अनुरूप विकसित होते हैं। वैदिक काल की शिक्षा और वर्तमान शिक्षा प्रणाली समयचक्र के अन्तराल व आवश्यकतानुरूप मानवीय गुणों के समावेश से भिन्न है। वैदिक कालीन शिक्षा में ऋषि, मुनि एवं महात्माओं द्वारा शास्त्रार्थ, तर्क व कंठस्थीकरण पर बल दिया जाता था। इस काल में 'अग्र शिष्य प्रणाली' भी प्रचलित थी। वर्तमान में शिक्षा सिद्धान्तों को महत्वपूर्ण माना जाता है जो कि सर्वांगीण विकास एवं कौशल विकसित कर सके। शिक्षण विधियों, प्रविधियों, सहायक उपकरणों का प्रयोग, संचार के विविध माध्यम तथा इनरेक्टिव चर्चा के तरीकों ने धार्मिक

विचारों को गौण कर दिया है लेकिन पिछड़े वातावरण में विघटनकारी तर्कों का प्रभाव है।

महात्मा गांधी, विनोबा भावे एवं लोकमान्य तिलक ने गीता के माध्यम से बालकों में जीवन मूल्य विकसित करने के लिए प्रेरित किया है। इससे शिक्षा व्यक्ति और समाज दोनों के लिए कल्याणकारी सिद्ध हो सकती है। चर्वाक दर्शन के अनुसार केवल "प्रत्यक्ष ही प्रमाण है।" हम बहुत सा कार्य अनुमान से करते है लेकिन अनुभव ज्ञान प्राप्ति का प्रमाणिक साधन है। ज्ञानार्जन के लिए उचित वातावरण एवं व्यवस्था दी जानी चाहिए।

जीवन मूल्य

मूल्य शब्द को विभिन्न दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों ने अलग-अलग परिभाषित किया है। गुड ने मूल्य को सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक सौंदर्य बोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना है। विलियम्स ने हमारे व्यवहार के चयन करने में सहायक संकल्पनाओं को मूल्य बताया है। पारसन्स ने मूल्यों को 'चयन का मानदंड' बताते हुए कहा है कि समाज व्यवस्था के विभिन्न आयामों में मूल्यों को मानव व्यवहारों को अनुबन्धित करने वाला माध्यम माना है। मिल्टन का मानना है कि जीवन मूल्यों की जड़े सभी प्राणियों में बहुत गहरी होती हैं।

मूल्यों के प्रकार

सामान्यतः मूल्य दो प्रकार के होते हैं - नैमित्तिक मूल्य और आंतरिक मूल्य। किसी विशेष प्रयोजन के मूल्यों को नैमित्तिक मूल्य कहते हैं लेकिन जिन मूल्यों का अपने अतिरिक्त कोई प्रयोजन नहीं होता वे आंतरिक मूल्य होते हैं। आन्तरिक मूल्यों को जीवन मूल्यों में सामहित किया जाता है।

प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा निदेशालय, बीकानेर, राजस्थान के नैतिक शिक्षा उपागम नामक प्रकाशन में 32 जीवन मूल्यों को बताया है, ये 32 जीवन मूल्य इस प्रकार हैं - (1) सच्चाई (2) सहयोग (3) साहस (4) परोपकार (5) सहानुभूति ..... (11) प्रेम (12) दृढ़निश्चय (13) क्षमता (14) मित्रता (15) सादगी (16) निर्भीकता (17) अनुशासन (18) दान (19) दया (20) धैर्य (21) सहिष्णुता (22) तत्परता (23) आत्मविश्वास (24) कर्त्तव्य परायणता (25) दूसरों का आदर (26) स्वावलम्बन (27) श्रम में निष्ठा (28) त्याग की भावना (29) दूसरों के गुणों की प्रशंसा (30) समाजसेवा की भावना (31) फिजूल खर्ची (32) आवश्यकता से अधिक संग्रह न करना।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली ने शिक्षा में सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों पर दस्तावेज में 83 मूल्यों को बताया है। ये इस प्रकार हैं - (1) दूसरों के सांस्कृतिक मूल्यों की सराहना (2)

अस्पृश्यता विरोध (3) नागरिकता (4) दूसरों की चिंता (5) दूसरों का ध्यान रखना (6) सहयोग (7) सामान्य अच्छा (8) प्रजातांत्रिक निर्णय लेना (9) व्यक्ति की महत्ता (10) शारीरिक कार्य का का सम्मान (11) साथी की भावना (12) अच्छे आचरण (13) राष्ट्रीय समाकल (14) आज्ञापालन (15) समय का सदुपयोग (16) ज्ञान की खोज (17) समय (18) करूणा (19) सामान्य लक्ष्य (20) शिष्टाचार (21) भक्ति (22) स्वास्थ्यकर जीवन (23) अखण्डता (24) शुचिता (25) निष्कपटता (26) आत्मनियंत्रण (27) साधन सम्पन्नता (28) नियमितता (29) दूसरों का सम्मान (30) वृद्धावस्था का सम्मान (31) सादा जीवन (32) सामाजिक न्याय (33) स्वानुशासन (34) स्व-सहायता (35) स्व-सम्मान (36) आत्मविश्वास (37) स्व-समर्थन (38) स्वाध्यान (39) आत्मनिर्भरता (40) आत्मनियंत्रण (41) समाजसेवा (42) मानव जाति की एकात्मकता (43) अच्छे व बुरे में विवेध का भाव (44) सामाजिक उत्तरदायित्व का भाव (45) स्वच्छता (46) साहस (47) जिज्ञासा (48) धर्म (49) अनुशासन (50) सहनशीलता (51) समानता (52) मित्रता (53) वफादारी (54) स्वतंत्रता (55) दूरदर्शिता (56) सज्जनता (57) कृतज्ञता (58) ईमानदारी (59) सहायता (60) मानवतावाद (61) न्याय (62) सत्यता (63) सहिष्णुता (64) सार्वभौमिक (65) सार्वभौमिक प्रेम (66) राष्ट्रीय व जन सम्पति का महत्व (67) पहल (68) दयालुता (69) जीवों के प्रति दया (70) धर्म परायणता (71) नेतृत्व (72) राष्ट्रीय एकता (73) राष्ट्रीय संचेतना (74) अहिंसा (75) शांति (76) देशभक्ति (77) समाजवाद (78) सहानुभूति (79) धर्म निरपेक्षता (80) पृच्छा भाव (81) दलभावना (82) समय की पाबंदी (83) दल कार्य।

वी.एन.के. रेड्डी ने अपनी पुस्तक 'मैन एजूकेशन एण्ड वैल्यूज' में तीन प्रकार के मूल्यों का वर्णन किया है - (1) भौतिक मूल्य (2) आर्थिक मूल्य (3) मनोवैज्ञानिक मूल्य।

मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया

रथ, हर्मिन एवं साहमन ने मूल्य निर्धारण प्रक्रिया के सात मानदण्ड माने हैं - (1) स्वतंत्र चयन (2) विकल्पों में से चयन (3) सभी विकल्पों के परिणामों पर मनन के बाद चयन (4) महत्व देना (5) दृढ़तापूर्वक चयन करना (6) चयन की क्रियान्वति (7) पुनरावृत्ति।

शिक्षा में मूल्यों की आवश्यकता एवं महत्व

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के पैरा 8.4 और 8.5 में शिक्षा को सामाजिक और नैतिक मूल्यों के लिए एक प्रभावी उपकरण बनाने की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए मूल्य परक शिक्षा पर काफी बल दिया है। सांस्कृतिक विविधता वाले हमारे समाज में शिक्षा को लोगों के बीच एकता एवं अखण्डता की भावना जगाने वाले सार्वभौमिक

शाश्वत मूल्यों का विकास करना चाहिए ऐसी मूल्यपरक शिक्षा से रूढ़िवाद, धार्मिक उन्माद, हिंसा, अंधविश्वास और भाग्यवाद को समाप्त करने में मदद मिलेगी।

आज का विद्यार्थी विभिन्न विरोधों व भ्रमों में खोया हुआ महसूस कर रहा है। आज दोहरे मापदण्ड हो गऐ हैं। शाब्दिक रूप से जो बात कहते हैं, व्यवहार में अलग कार्य करते हैं। आज व्यक्ति भौतिकता की चकाचौंध में भारतीयता से हटकर पाश्चात्य संस्कृति जैसा दिख रहा है। व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक जीवन के मूल्य मानदण्ड शिथिल हो रहे हैं। व्यक्ति स्वकेन्द्रित हो गया है और उच्च संस्कारों व मानवीय गुणों से दूर हो गया है। मूल्यों की कमी के कारण ही सभी व्यक्ति अपने वर्तमान से संतुष्ट एवं परेशान दिखाई दे रहे हैं।

भारतीय जीवन मूल्य

भारतीय जीवन मूल्यों में चार पुरूषार्थ - धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को माना है। पुरूषार्थ का अर्थ प्रयोजन है और सुखी जीवन की प्राप्ति मानव जीवन का सबसे बड़ा प्रयोजन है। मानव जीवन में ज्ञान की प्राप्ति से ही मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। मनुस्मृति में मनु ने धर्म के 10 लक्षण बताए हैं - क्षुति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रह, घी, विद्या, सत्य एवं आक्रोश। ये नैतिक एवं आध्यात्मिक उत्थान के लिए आवश्यक हैं। अर्थ की भारतीय दर्शन में धर्म की सिद्धि के लिए माना है। काम को शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के आनन्द के लिए लिया है। शारीरिक आनन्द या इन्द्रिय सुख से समाज अक्षुण बना रहता है।

गौतम बुद्ध एवं डॉ. अम्बेडकर के शैक्षिक विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता

श्रीमती अनिता शर्मा
आचार्य प्रोफेसर,
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, जयपुर

भारत प्राचीन समय से ही विविधताओं का देश रहा है। इसमें प्राचीन समय से ही वैचारिक संघर्ष चलता आ रहा है। विभिन्न विचारधाराओं के लोगो ने अपने-अपने मत का प्रचार प्रसार किया है। जैसा कि हम जानते हैं कि भारतवर्ष में महान पुरूषों के जन्म व जीवन की घटनाओं को प्रायः आचर्यचकित कर देने वाली घटनाओं से महिमा मंडित किया जाता है। देवी-देवताओं, अवतारों एवं पीर पैगंबरो के जीवन चरित्र एक से एक ऐसी घटनाओं से भरे पडे हैं, जिनके न सिर है न पांव है।

हमें जीवन चरित्र लिखते समय सही और सच्ची बातें ही लिखनी चाहिए और खास तौर पर ऐसे महापुरूषो की जिन्होंने आजीवन पाखंड एवं अम्बेडकर के विरूद्ध लड़ाई लड़ी है। गौतम बुद्ध एवं बाबा साहेब डॉ अम्बेड़कर के शैक्षिक विचारों का अध्ययन किया है। हमने जाना है कि बुद्ध एवं अम्बेड़कर के शैक्षिक विचारों में क्या समानताएं हैं। ऐसा क्या कारण था कि डॉ अम्बेडकर ने तथागत को अपना प्रथम कबीर को दूसरा एवं ज्योतिराव फूले को तीसरा सामाजिक गुरु माना। भारत भूमि विभिन्न दार्शनिक विद्वानों एवं सामाजिक चिंतकों की धारा रही है। इन विद्वानों में तथागत बुद्ध का स्थान सर्वोपरि है। क्योंकि बौद्ध दर्शन विश्व के प्राचीनतम दर्शनो में से एक है, जो मानवतावादी सिद्धांत पर आधारित है और जैसा कि भारत रत्न डॉ. अंबेडकर ने कहा था कि मानव जाति के लिए केवल बुद्ध का रास्ता ही सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वमान्य है, जो मानव जाति के संपूर्ण कल्याण हेतु बनाया गया है।

उनका कहना था कि पहले हम भारतीय हैं और बाद में कुछ और जबकि तत्कालीन नेताओ का मानना था कि हम हिंदू हैं। बाबा साहेब ने इस तरह की संकीर्ण मानसिकता को जड़ से उखाड़ने का निश्चय किया है और टुकड़ों में बंटे हुए देश को एक अखंड भारत के रूप मे राष्ट्रीयता के सूत्र में बांधने का कार्य किया। उनकी धारणा राष्ट्रीयता को कायम

रखने की थी। यही कारण था कि 1936 में की गई घोषणा "मैं एक हिंदू के रूप में पैदा हुआ हूँ यह मेरे वश की बात नहीं, लेकिन मैं एक हिंदू के रूप में हरगिज नहीं मरूंगा।" अतः उन्होंने अपने जीवन के अंतिम पड़ाव में 14 अक्टूबर 1956 में नागपुर की पावन धारा ; जहां प्राचीन समय में बौद्धों का केंद्र रहा था, 5 लाख अनुयायियो के साथ बौद्ध धर्म ग्रहण करके भारत को उसकी अपनी विरासत भेंट की, इसके साथ ही उन्होंने अपने मूल भारतीय होने का भी परिचय दिया। भारतवर्ष बौद्धकालीन समय से अपनी विद्वता के कारण विश्व गुरु माना जाता रहा है। इसका मुख्य कारण था यहां की शिक्षा और विहारो की व्यवस्था। बुद्ध के समय यहां नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला इत्यादि प्रसिद्ध शिक्षा केंद्र हुए हैं। जिनमें विश्वभर से विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते थे। इन विश्वविद्यालयो में पढना गौरव की बात समझी जाती थी। यह बुद्ध की ही दी हुई शिक्षाओं का असर था कि चीनी यात्री फाह्यन अपने संस्मरण में लिखता है कि बड़े आश्चर्य की बात है कि भारतीय लोग इतने अधिक चरित्रवान हैं कि वहां की स्त्रियां आधी रात्रि में अपने गहनों से सुसज्जित होकर कहीं भी निःसंकोच आ जा सकती हैं। डॉ. अंबेडकर तथागत को अपना आदर्श मानते थे। उन्होंने बौद्ध दर्शन का गहनता से अध्ययन किया।

वे बौद्ध धर्म की उपलब्धियो को जन-जन तक पहुंचाना चाहते थे। उनका मत था कि तथागत बुद्ध द्वारा दी गई शिक्षाओं को यदि वर्तमान समय में लागू किया जाए तो भारत फिर से न केवल सोने की चिड़िया अपितु विश्व गुरु बन जाएगा। उनके इन्हीं विचारों का परिणाम था कि उन्होंने तथागत की बहुत सी शिक्षाओं, नियमों एवं सिद्धांतों को अपने द्वारा प्रदत्त भारतीय संविधान में सम्मिलित किया, जो आज हमें भारत में चैन की सांस लेने के लिए स्वच्छंद वातावरण देने का प्रयास डॉ. अंबेडकर अपने समय के ही नहीं अपितु आज तक भारत के सबसे बुद्धिमान एवं प्रसिद्ध विद्वान हुए हैं। वे एक बहुत अच्छे प्रबंधक, कानून वेत्ता, सामाजिक चिंतक एवं दूरद्रष्टा थे। यह उनकी दूर दृष्टि का ही परिणाम था कि उन्होंने संपूर्ण भारतीय इतिहास का गहनता से अध्ययन किया और उसकी तुलना विश्वभर के इतिहास से की। उनका मानना था कि जब कुदरत ने कोई किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जैसे वायु सभी को समान रूप से प्राप्त होती है, सूर्य का प्रकाश सभी को समान रूप से प्राप्त होता है। उसी तरह जल, पृथ्वी एवं खुला आसमान सभी के लिए समान है। वह किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं करता। फिर ये भेदभाव क्यों हैं वे समझ गए कि यह जरुर इंसानों द्वारा अपने स्वार्थ के लिए बनाया गया ढोंग हैं, जिसका कहर निम्न जातियां सदियों से ढोती आ रही हैं। अतः उन्होंने इस दासता को जड़ मूल समाप्त करने का निर्णय किया। जिसके परिणाम स्वरूप आज भारतीय संविधान मूल रूप से समता, बंधुता एवं न्याय रूपी स्तंभों पर खड़ा है। अतः हम कह सकते हैं कि तथागत बुद्ध डॉ. अंबेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों में न केवल समानता है बल्कि एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। इनमें से एक दर्शन का सैद्धांतिक पक्ष है, जो विचार प्रधान करता है वहीं दूसरा पक्ष भारतीय संविधान के रूप व्यवहारिक शिक्षा की वकालत करता है। तथागत बुद्ध को

सम्पूर्ण एशिया का ज्योति पुंज माना जाता है। तथागत ऐसी महान विभूति हुए है। जिन्होंने सम्पूर्ण विश्व को समता मैत्री एवं न्याय का पाठ पढाया, भारत रत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी के अनुसार केवल बुद्ध का रास्ता ही सम्पूर्ण मानव जाति के लिए सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वमान्य है। उनके अनुसार तथागत सम्बुद्ध का मध्यम मार्ग ही मानवता को दरिद्रता एवं विनाश से बचा सकता है। इन्हीं की वकालत बोधिसत्व डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी ने आजीवन की है। वे मानते थे धर्म इंसानों के लिए हैं। इंसान धर्म के लिए नहीं, धर्म से मनुष्य में संस्कार आदि उत्पन्न होते हैं।

डॉ. अम्बेड़कर ने अनिवार्य तत्व माना है। 12 फरवरी 1938 में अम्बेडकर ने एक सभा को संबोधित करते हुए कहा था कि- चरित्र के बिना शिक्षा का कोई महत्व नहीं है। शिक्षा के दुधारा शस्त्र होने की वजह से उसे चलाना खतरनाक है। चरित्र और विनयहीन सुशिक्षित मनुष्य पशु से भयंकर होता है। अगर सुशिक्षित मनुष्य की शिक्षा गरीब जनता के कल्याण के विरूद्ध होती है तो वह समाज के लिए अभिशाप बन जाएगा। ऐसे सुशिक्षितों को धिक्कार हो। शिक्षा की अपेक्षा चरित्र अधिक महत्व का है। युवकों की धर्मविरोधी प्रवृति देखकर मुझे आश्चर्य होता है कि कुछ लोग कहते हैं- धर्म अफीम की गोली है। लेकिन यह सच नहीं। मुझमें जो कुछ गुण विद्यमान हैं या मेरी शिक्षा के कारण सामाजिक कल्याण हुआ, वह मुझमें विद्यमान धार्मिक भावना के कारण ही है। इस प्रकार डॉ. अम्बेडकर चाहते थे कि शिक्षा नीतिपरक हो जो मनुष्य को एक दूसरे के साथ उचित व्यवहार करने के लिए निर्देशित करे। डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय एवं पाश्चात्य के दोनों के साहित्य, इतिहास, समाज एवं राज व्यवस्था का गहनता से अध्ययन किया। तत्पश्चात् उन्होंने पाया कि भारत के भादू अतिशूद्र दुनिया भर के मानवो की तुलना में पशुतुल्य जीवन व्यतीत कर रहे हों जिसके लिए भारत की सामाजिक व्यवस्था और परम्परागत रूढियां ही जिम्मेदार थी। उसके उपाय के लिए उन्होंने शिक्षा को ही एकमात्र हथियार माना और उन्होंने कहा था कि "दास को उसकी दासता के बारे में अनुभव करा दिया जाये तो वह स्वयं विद्रोह कर उठेगा तथा शिक्षा ही एकमात्र ऐसा मूलमंत्र है जिसके सम्प्रेषण से दलित वर्ग अपनी दासता को अनुभव कर सामाजिक असमानता के विरूद्ध संघर्ष कर सकते हैं व अपने सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक अधिकार प्राप्त कर सकते हैं।" इसलिए डॉ. अम्बेडकर ने शिक्षा पर बल दिया। उस समय अछूत छात्रों को विद्यालयो में प्रवेश मुश्किल से दिया जाता था।

इस प्रकार समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग शिक्षा से वंचित रह गया। परिणामतः सबसे बड़ा खामियाजा देश को उठाना पड़ा। डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण भारत वर्ष में शिक्षा का प्रचार-प्रसार कर देश को मजबूत करना चाहते थे। उनकी मंशा थी कि सामाजिक विसंगतियों को दूर कर देश में नवीन आयामों की स्थापना की जाए। उसके लिए उन्होंने प्रयास भी किए। उन्हें ज्ञान था कि असमानता के मूल तत्व साहित्य में छिपे हुए हैं। इसलिए उन्होंने संस्कृत भाषा को राज भाषा

बनाने की वकालत की थी क्योंकि यदि संस्कृत को राजभाषा बना दिया जाता तो सामाजिक विसंगतियों को समझने में देर नहीं लगती। किन्तु उनका प्रयास पूर्ण रूप नहीं ले सका। अंततः हिन्दी को राष्ट्र भाषा घोषित किया गया। यदि संस्कृत भाषा को राष्ट्र भाषा का दर्जा मिल जाता तो जन-जन सामाजिक विसंगतियों के मूल तक पहुंच कर उसे उखाड़ने में सक्षम हो सकता था। फिर भी डॉ. अम्बेडकर ने सभी समुदायों को धार्मिक स्वतंत्रता अर्थात किसी भी मत में आस्था रखने, पूजा-पाठ करने, प्रचार करने, संस्थाएं संगठित करने और शिक्षा देने की स्वतंत्रता का अधिकार दिया।

बशर्ते उससे सामाजिक शान्ति व्यवस्था और नैतिक आदर्शों का उल्लंघन न होता हो। उन्होंने प्रावधान किया कि अपने खर्च पर धर्मार्थ संस्थाओं, धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं, स्कूलों और अन्य शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना और उनमें अपने धर्म के पालन करने का अधिकार स्थापित किया। संविधान में अल्पसंख्यक वर्गों में धर्म, संस्कृति और निजि कानून के संरक्षण और उनकी शिक्षा, भाषा, धर्मार्थ संस्थाओं के प्रोत्साहन तथा राज्य और स्वायत संस्थाओं द्वारा दिए जाने वाले अनुदान में देय अंश के संरक्षण के लिए पर्याप्त व्यवस्था कायम की। इस प्रकार डॉ. अम्बेडकर चाहते थे कि देश में शिक्षा का अधिकार सभी को समान रूप से होना चाहिए जिससे देश का विकास सही रूप से हो सके। डॉ. अम्बेडकर उसी तरह चमके जैसे वाशिंगटन नीग्रो लोगों के मध्य में चमके। डॉ. अम्बेडकर बखूबी जानते थे कि बिना शिक्षा नौकरी नहीं मिल सकती थी और न ही जागृति आ सकती थी। राजनैतिक और नागरिक अधिकारों के लिए एकता कायम नहीं की जा सकती थी। शिक्षा ही ऐसा माध्यम थी जिससे सारी समस्याएं अपने आप समाप्त हो सकती थी। उनका मानना था कि ज्यादा से ज्यादा शिक्षा और ज्यादा से ज्यादा उन्नति के अवसर उपलब्ध होने चाहिए। डॉ. अम्बेडकर ने बच्चों को पढ़ाने पर बल दिया।

डॉ. अंबेडकर तथागत को अपना आदर्श मानते थे। उन्होंने बौद्ध दर्शन का गहनता से अध्ययन किया। वे बौद्ध धर्म की उपलब्धियों को जन-जन तक पहुंचाना चाहते थे। उनका मत था कि तथागत बुद्ध द्वारा दी गई शिक्षाओं को यदि वर्तमान समय में लागू किया जाए तो भारत फिर से न केवल सोने की चिड़िया अपितु विव गुरु बन जाएगा। उनके इन्हीं विचारों का परिणाम था कि उन्होंने तथागत की बहुत सी शिक्षाओं, नियमों एवं सिद्धांतों को अपने द्वारा प्रदत्त भारतीय संविधान में सम्मलित किया, जो आज हमें भारत में चैन की सांस लेने के लिए स्वच्छंद वातावरण देने का प्रयास कर रहा है। अतः हम कह सकते हैं कि तथागत बुद्ध डॉ. अंबेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों में न केवल समानता है बल्कि एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। इनमें से एक दर्शन का सैद्धांतिक पक्ष है, जो विचार प्रदान करता है वहीं दूसरा पक्ष भारतीय संविधान के रूप व्यवहारिक शिक्षा की वकालत करता है। प्रस्तुत विवेचना के आधार पर हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार आज मनुष्य संस्कार विहिन हो रहा है वह पाश्चात्यकरण की अंधी दौड़ दोड़ रहा है ऐसे मे उसके लिए

तथागत सम्बुद्ध द्वारा प्रतिपादित शिक्षाओं की और अधिक आवश्यकता है। उन्हीं का पालन करवाने के लिए डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय संविधान में प्रावधान करके ऐसा करने का प्रयास किया। भारतीय संस्कृति प्राचीनतम एवं श्रेष्ठतम संस्कृति है। जिसको कुछेक संकीर्ण मानसिकता वाले लोगों ने समय-समय पर धूमिल करने का प्रयास किया। लेकिन जिस प्रकार सारी नदियां समुद्र में जाकर एक हो जाती है ठीक उसी प्रकार ऐसी संकीर्ण मानसिकता का ज्यादा प्रभाव भी भारतीय मूल संस्कृति पर नहीं पड़ता। जिसे पुनः जीवित करने के लिए समय-समय पर महापुरुषों ने प्रयास किया है। चौथी शताब्दी ई. पूर्व में हुए तथागत बुद्ध को पुनः भाद्ध रुप में प्रस्तुत करने का प्रयास भी डॉ. अम्बेडकर ने किया है। अतः तथागत बुद्ध एवं डॉ. अम्बेडकर के शैक्षिक विचारों की वर्तमान युग में पहले से ही अधिक प्रासंगिकता है।

संदर्भ सूची

1. तिवाडी अरूण कुमार, गौतम बुद्ध, प्रकाशक प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. मोजीन मिचेल भरत लाल बौद्ध धर्म की कहानियॉ प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली|
3. वाशनिक डॉ के.पी. गौतम बुद्ध से सीखे जीवन जीने की कला।
4. गुप्ता डॉ मोहनलाल प्राचीन भारत का इतिहास, प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली|
5. मकवाणा किशोर अम्बेडकर का जीवन दर्शन, प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
6. मकवाणा किशोर डॉ. अम्बेडकर का राष्ट्रीय दर्शन प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली|

"वेदांत दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन"

सुभाष मीना
सहायक आचार्य
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, जयपुर

सारांश

वेदांत दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने के उद्देश्य से प्रस्तुत शोध में वेदान्त दर्शन में निहित मानवतावादी एक प्राचीन परंपरा, उपनिषदों में मानवतावाद, भागवद् गीता में मानववाद, दार्शनिक संप्रदायों में मानववाद, पाश्चात्य मानववाद से तुलना, शिक्षा का मानवीकरण, मानववाद के आयाम के अंतर्गत पुनर्जागरण मानववाद, एकेडमिक मानववाद, कैथोलिक मानवाद, धार्मिक मानववाद, मार्क्सवादी मनववाद, प्रकृतिवादी मानववाद का विश्लेषण वेदान्त दर्शन में नीहित मानवतावादी दृष्टिकोण के संदर्भ में अध्ययन किया गया तथा मानवतावाद के महत्व के अंतर्गत अध्ययन करते हुए पाया गया कि मनुष्य के लिए मानवता आवश्यक है एवं बाल केंद्रित शिक्षा, मानववादी दर्शन पर आधारित है। मानवीय शिक्षा में शिक्षक का स्थान महत्वपूर्ण है तथा मानववादी दृष्टिकोण अनुशासन विकसित करता है तथा मानववादी दृष्टिकोण के अनुसार मनुष्य समाज का प्रतिनिधि है । मानववाद सामाजिक न्याय का दर्पण है। मानववादी शैक्षिक संकल्पना का अध्ययन के अंतर्गत भारत में मानववादी परंपरा, प्राणी ब्रह्म का दर्शन है का अध्ययन किया गया है । वेदान्त और मानववाद का विश्लेषणात्मक अध्ययन का यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि मानववाद का लक्ष्य मानव कल्याण है, तथा सम्पूर्ण विश्व एक सत्ता है, ईश्वर व्यष्टियों की समीष्ट है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानवीय दृष्टिकोण भारत की पुरातन संस्कृति का एक आवश्यक अंग है।

प्रस्तावना

वेदांत में मानव आत्मा के दो पहलू माने जाते हैं- जीवात्मा और परमात्मा। जीव विज्ञानी उसके दुख और बंधन,

आज्ञान के कारण है। आत्मा का ज्ञान होने पर यह अज्ञान और उसके दुख और बंधन भी नष्ट हो जाते हैं। परमात्मा एक है। भारतीय विचारकों ने अनुभव और चिंतन से यह निश्चित किया कि एकात्मता का दृष्टिकोण ही मानव की स्वाभाविक स्थिति है और जब किसी कारण से यह एकात्मता नहीं रह पाती, तब-तब मनुष्य अलगाव राग-द्वेष, द्वन्द और संघर्ष का शिकार होता है और उसे कष्ट मिलते हैं चूंकि एकात्मकता का विषय सब जगह समान रूप से व्यापक तत्व है। इसलिए मानव समाज में इसे मानवता कहा जा सकता है। वेदांत में प्रकृति में भी यही एकात्मक तत्व माना गया है जो मनुष्य में है। इस प्रकृति दर्शन से मनुष्य और प्रकृति का समन्वय होता है।

वेदांत को जितना मानवतावादी कहा जा सकता है, उतना ही प्रकृतिवादी भी कहा जा सकता है और उतना ही ईश्वरवादी भी कहा जा सकता है क्योंकि उपनिषदों के अनुसार मानव प्रकृति और ईश्वर में एक ही तत्व विद्यमान है। वही हमारे चिंतन का आधार होना चाहिए। यही तत्व सच्चिदानंद है। वेदांत के अनुसार परम तत्व ब्रह्म है। ब्रह्म ही सत्य है। वह अनंत नित्य, सर्वव्यापी और शुद्ध चेतन्य है। वह सब की आत्मा है अर्थात वह तब मानव में उपस्थित मानव तत्व है। वह संसार के समस्त पदार्थों का आधार, परंतु सूक्ष्म तत्व है। वह जगत का आदि अंत और स्थिति है। प्रकृति में उसी की शक्तियां काम करती है। तैत्तरीय उपनिषद के शब्दों में "उसी से सब मृत प्राणी जन्म लेते हैं। उसी में वे जीते हैं और उसी में समा जाते हैं।" मानववादी दृष्टिकोण से ब्रह्म की सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्याख्या सच्चिदानंद है। वेदांत में ब्रह्म को सच्चिदानंद कहा गया है। ब्रह्म सत भी है और चिद् भी है अर्थात जहां कहीं अस्तित्व है, वहां ब्रह्म है और जहां कहीं चेतना है, वहां ब्रह्म है। इस प्रकार ब्रह्म आनंद का अर्थ सुख नहीं है, बल्कि स्वभाव है इसलिए वेदांत में ब्रह्म को सब प्रकार के वेदों से परे माना गया है। सभी वेद व्यावहारिक होते हैं। ब्रह्म से भेद से अंतर नहीं होता बल्कि परस्पर पूरकता बढ़ती है।

समस्या कथन

"वेदान्त दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन"

समस्या का औचित्य व प्रासंगिकता

वर्तमान शिक्षा प्रक्रिया बदलते परिवेश एवं पाश्चात्य प्रभाव के कारण मानवतावादी दृष्टिकोण से पृथक होती जा रही है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि मानव परिवार और राष्ट्र, राष्ट्र और मानवता तथा अंत में मानवता और प्रकृति के कल्याण में परस्पर पूरक बने है। अतः मनुष्य का समस्त ज्ञान विज्ञान उसका समस्त दर्शन, विश्व का ऐसा रूप उपस्थित करने का प्रयास है जो हमारे मूल्यों की प्राप्ति में सबसे अधिक सहायक है। इस हेतु वेदांत दर्शन में निहित

मानवतावादी दृष्टिकोण का अध्ययन आवश्यक प्रतीत होता है। यही प्रस्तावित शोध का औचित्य एवं प्रासंगिकता है।

पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या

मानवतावादी:- मानव कल्याण और सामाजिक सुधार को बढ़ावा देना।

सामाजिक न्याय:- समाज के हर वर्ग को समान अवसर मिले। जीवन की मौलिक जरूरत से कोई वंचित न रहे।

मानव कल्याण:- पूर्ण रूप से दुखों का नाश तथा परमानन्द का नित्य अनुभव।

एकात्मकता: - एकात्मक होने की अवस्था।

जीवात्मा:- जीव, प्राणियों में रहने वाली आत्मा।

परमात्मा: - परमब्रह्म, ईश्वर।

शोध क्षेत्र का परिसीमन

प्रस्तुत शोध को वेदान्त दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन तक सीमित किया गया है।

शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध में वेदांत दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण के अंतर्गत मानवतावादी प्राचीन परंपरा, उपनिषदों में मानवतावाद, भागवद् गीता में मानवतावाद, दार्शनिक संप्रदायों में मानवतावाद, शिक्षा का मानवीकरण, मानववाद के आयाम, प्रकृतिवादी मानववाद, मानववाद का महत्व, मानववादी शैक्षिक संकल्पना, वेदान्त और मानववाद का संबंध, का अध्ययन करना प्रस्तुत शोध का उद्देश्य रहा है।

शोध विधि:-

प्रस्तुत शोध में दार्शनिक विधि का प्रयोग किया गया है।

शोध निष्कर्ष

वेदान्त दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने से इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि वेदान्त दर्शन में निहित मानवतावाद का लक्ष्य मानव कल्याण है तथा संपूर्ण विश्व एक सत्ता है तथा उसी को ब्रह्म

कहते हैं। वह सत्ता जब विश्व के मूल में प्रकट होती है तो उसे ईश्वर कहा जाता है। वहीं सत्ता जब इस लघु विश्व अर्थात् शरीर के मूल में प्रकट होती है तो आत्मा कहलाती है। वेदान्त के अनुसार ईश्वर व्यष्टियों की समिष्ट है और साथ ही वह एक व्यष्टि भी है। मनुष्य के लिए वांछनीय सद्गुण देशकाल के अनुसार बदलते रहते हैं। मुक्ति प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर होने के लिए मनुष्य को सदाचरण का पालन करना ही होगा। इस प्रकार वेदान्त का मानना है कि मनुष्य संसार के अन्य मनुष्य से पृथक् जीव नहीं है, बल्कि वह विश्वचेतना का ही एक एक अंग है। इसलिए उसकी पूरी क्षमताओं का प्रयोग विश्व कल्याण के लिए किया जाना चाहिए तभी मनुष्य का जीवन सार्थक माना जाएगा। अतः वर्तमान में वेदान्त दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण को स्वीकार करने की आवश्यकता महसूस की जाती रही है।

सुझाव

प्रस्तुत शोध वेदान्त दर्शन में निहित मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है, इसके अतिरिक्त वेदान्त दर्शन की सामाजिक पृष्ठभूमि का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जा सकता है तथा वेदान्त दर्शन के धार्मिक दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ओड. लक्ष्मी लाल के : शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर (1988)
2. उपाध्याय. प्रो. बलदेव : भारतीय दर्शन, शारदा, मन्दिर, वाराणसी (1960)
3. भटनागर, सुरेश :- भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ|
4. सक्सेना . लक्ष्मी :- समकालीन भारतीय दर्शन, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ (1974)
5. कृष्णन् सर्वपल्ली. एस. डी. राधा :- भारतीय दर्शन भाग - 2, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली
6. अपूर्वानन्द स्वामी : आचार्य शंकर, रामकृष्ण मठ, धन्तोली, नागपुर (1970)
7. उपाध्याय गंगा प्रसादः अद्वैतवाद, कला प्रेम, प्रयाग (1957)

जीवनयात्रा

डॉ. सीताराम दोतोलिया
बिलौची (जयपुर)

कदा कालचक्रं व्यतीतं न जाने ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे.....

1. **जगज्जंजाल महा व्यस्ततायां,**
कदां वयो मे विगतं न जाने।
कदा कालचक्रं व्यतीतं न जाने,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे ।।

2. **स्कन्धस्थिता ये शिशवः कदासन्,**
जाताः कदा स्कन्धतुल्या युवानः।
कदा कालचक्रं व्यतीतं न जाने
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे।।

3. **कदारम्य भाटकीयाल्लघुगृहात्,**
स्वकीयं जीवनं प्रारब्धवानहम्।
कदा स्वकीयं गृहमागतोऽहम्,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो में।।

4. **द्विचक्रयानेन प्रचलन् कदाहम्,**
उच्चैः श्वसिमिस्म तदा हि काले।
कदारभ्य भ्रमामि कारयानेन,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे।।

5. **पितृणां संरक्षकः कदाहमासम् ,**
कदाभवं पुत्रपुत्रीणां न जाने।
कदा कालचक्रं व्यतीतं न जाने,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे ।।

6. काले हि तस्मिन् दिवसे यदाहं,
चिन्तां विहाय निर्भयो शये स्म।
निद्रा व्यपगता कदा निशायां,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे ।।

7. केशान् मनोज्ञानवलोक्य कृष्णान्,
सखे! कदा गर्वशीलोऽहमासम्।
कदा श्वेतवर्णाऽभूवन्न जाने,
कदा वयो मे विगतं न जाने।।

8. कदान्वीक्षितुं राजकीयसेवां,
मोघं भ्रमामि स्म इतस्ततोऽहम्।
सेवानिवृतिं कदा प्राप्तवानहं,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे।।

9. धनमर्जितुं स्वकीयै बालकैः,
सखे! तदा कार्यमग्नोऽहमासम्।
कदा दूरं गता प्रिय बालका मे,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे।।

10. माता पिता मे हि भ्राता भगिनी,
कदा विचार्य गर्वयुक्तोऽहमासम्।
पत्नी हि जाता कदा संसाररूपा,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे।।

11. कर्तुं स्वात्मनेऽपि विचार आसीत्,
शरीरं तु जातं जराजीर्णमद्य।
कदा कालचक्रं व्यतीतं न जाने,
ज्ञानं न जातं सखे! विस्मयो मे।

शिक्षा कौस्तुभ त्रैमासिक पत्रिका
सदस्यता फार्म

नाम / संस्था का नाम ----------

ग्राम ---------- पोस्ट ----------

तहसील ---------- जिला ----------

फोन ---------- पिन कोड ☐☐☐☐☐☐

राशि (रुपये) ---------- बैंक का नाम ----------

डिमाण्ड ड्राफ्ट/मनीऑर्डर क्रमांक ☐☐☐☐☐☐ (डीडी / एमओ **राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ** के नाम से भेजे)

सदस्यता शुल्क : एक वर्ष - 500/- पांच वर्ष - 2100/-

सदस्यता हेतु लिखे

शिक्षा कौस्तुभ, राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षक विद्यापीठ

शाहपुरा बाग, आमेर रोड़, जयपुर

Mobile : 9460124083 E-mail : info@rspv.org Website : www.rspv.org

Bank Detail

Bank Name	:	**Punjab National Bank**
Branch	:	**Air Force School, Amer Road, Jaipur**
A/c No.	:	**2976010100001063**
IFS Code	:	**PUNB0620100**

विद्यापीठ में आयोजित कायक्रमों की झलकियाँ

प्रकाशक

पण्डित मोतीलाल जोशी
प्राच्य विद्या अनुसंधान केन्द्र

राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण
विद्यापीठ

राजस्थान संस्कृत साहित्य
सम्मेलन

शाहपुरा बाग, आमेर रोड़, जयपुर Ph. : +91-141-2671967 | E-mail : info@rspv.org | Website : www.rspv.org